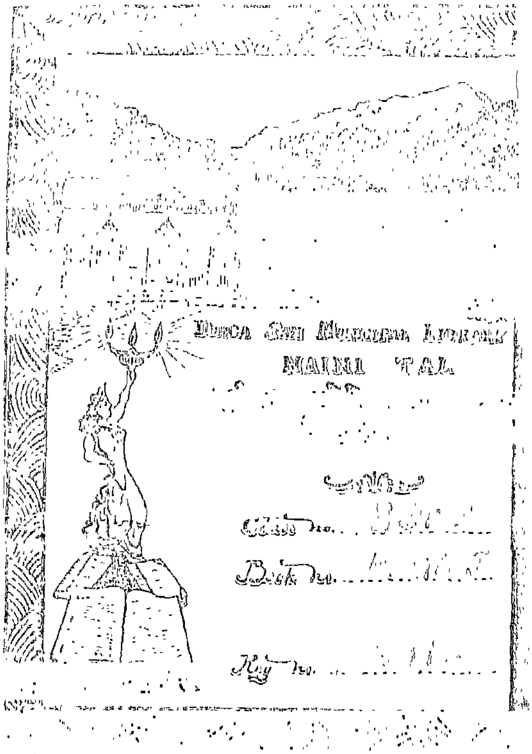

Durga Sah Municipal Library
NAINI TAL
Class No.
Book No.
Key No.

कृष्णचन्द्र

जब खेत जागे

उपन्यास

जब खेत जागे

उपन्यास

कृष्णचन्द्र

बाम्बे बुक हाउस

पोस्ट बाक्स नं: ३२४३

बाम्बे ३

प्रथम संस्करण

मूल्य २।।।)

मुद्रक—

बाम्बे प्रेस, बाम्बे ३.

मख़दूम के नाम

यद्यपि मैं किसान नहीं हूँ लेकिन मुझे किसानों के साथ रहने के बहुत से मौके मिले हैं। मेरा बचपन और लड़कपन तो किसानों के साथही गुज़ारा है। उन्होंने मुझे हल चलाना, खेतों में नलाई करना, सिंचाई करना, धान उगाना, फ़सल काटना, खलिहान लगाना और दूसरे ऐसे काम दिखाये जो किसानों की दिन प्रतिदिन की ज़िन्दगी से सम्बन्धित है। ज़मीन का प्यार और ज़मीन के ग़रीबों से घृणा का भाव मुझे भारतीय किसान ने ही दिया है। प्रकृति से प्रेम और स्वतन्त्र वातावरण में रहने और सांसलेने की अकांक्षा जो आप मेरी अधिकांश कहानियों में पायेंगे उसे भी मैंने किसानों के जीवन से प्राप्त किया है। उनके साथ रह कर मुझे अपनी आंखों से उन तमाम अत्याचारों और उनके भयानक विभागों को देखने का मौक़ा मिला है जो वर्तमान जीवन व्यवस्था ने पुरानी जीवन व्यवस्था के साथ मिलकर उनपर रवा रखी हैं। कभी कभी तो ऐसा मालूम हुआ है मानो यह जुआ खुद मैंने ही उनकी गर्दन पर रखा है क्योंकि गाँव में मैं अधिकारीवर्ग की सन्तान मेंसे था और मुझे ऐसा अनभव होता था कि आज जो कुछ हो रहा है उसके ज़िमेवार मेरे पिता हैं। मेरे पिता के दोस्त हैं। मेरे पिता के दोस्तों के दोस्त हैं। किसान और किसानों के लड़के मरे दोस्त थे और उनके घरों के दरवाज़े मेरे लिये हरवक़्त खुले रहते थे लेकिन रहता मैं

एक अधिकारी के घर में था जो मेरे पिता थे। इसलिये मैंने किसानों के जीवन को दोनों दरवाज़ो से देखा। देखा इसलिये नहीं कि देखना भी चाहता था बल्कि इस लिये कि देखनाही पड़ा। शोषण का यह क्रम जो एक दरवाज़े से शुरू होता था और दूसरे दरवाज़े पर खत्म होता था। इस सिलसिले को मुझे शुरु से आखिर तक हर रोज़ देखना पड़ता था। और जो चीज़ उस समय भी मेरी समझ में नहीं आती थी वह नैतिकता के दो वर्तमान पैमाने थे जो अधिकारी वर्ग ने अपने और किसानों के लिये अलग अलग निर्माण कर रखे थे। मसलन यह कि अधिकारियो को तो अच्छे कपड़ों की ज़रूरत थी लेकिन किसानों के लिये अच्छे कपड़ों की कोई ज़रूरत नहीं थी क्योंकि उससे वह अभिमानी हो जायेगीं। हमारे घर में और दूसरे अधिकारियों के घर में हर व्यक्ति दो तीन बार पेट भर के खाना खाता था लेकिन किसान को अगर दो वक्त खाना मिल जायगा तो बहुत बुरा होगा। इससे वह अकड़ जायेगा और सेवाचाकरी नहीं करेगा। हमारे यहाँ अगर कोई काम करे तो उसे उसके बदले में रुपये जरूर मिलने चाहियें मगर हम सब किसानों से मुफ्त काम लेते थे। हमारे यहां मांबहनों की इज़्ज़त थी। घर में उनका बहुत सम्मान किया जाता था। बल्कि हमारे इलाक़े के तहसीलदार साहब हिंदू होते हुय भी अपनी बीवी को हमेशा बुर्क़े में रखते थे लेकिन किसान की बहन माँ और बीबी की बेइज़्ज़ती जाइज़ थी। मैंने अपने लड़कपन में एक राजा साहब को देखा है। वह जब अपनी रियासत के

दौरे पर निकलते थे तो जिस गाँव मे जातेथे उसके सब किसानों और उनकी बहू बेटियों को बंधवालेते थे। पुरुषों को अलग कर देते थे और स्त्रियों को अलग। फिर पुरुषों को जूतों से पिटवाते थें और स्त्रियों को अपने कर्मचारियों के तम्बुओं में रातभर के लिये बांट देते थे। यह दृष्य मैंने स्वयं अपनी आंखों से देखा है और एक बार नहीं दो तीन बार देखा है। और कल्पना जगत में न जाने कितनी बार देखा है। यह मेरे लड़कपन की घटना है। लेकिन आज १९५३ में भी मेरे एक काँग्रिसी भाई ने बताया कि चन्दीगढ़ (पंजाब) से आगे शिमला जाते हुये कुछ देहात ऐसे हैं जहाँ पानी नहीं मिलता। इन देहातों की स्त्रियों को पानी लेने के लिये एक जंगली चश्मे पर जाना पड़ता है जो एक पहाड़ी पर है। और यह पहाड़ी और उसका जंगल महकमा जंगलात के आधीन है इस लिये इस चश्में से पानी पीने के लिये स्त्रियों को अपना सतीत्व रिशवत में देना पड़ता है। यह साहब एक जिम्मेदार कांग्रेसी हैं। एक जिम्मेदार कांग्रेसी मिनिस्टर के लड़के हैं। और एक जिम्मेदार कांग्रेसी अखबार के एडीटर हैं। और इस घटना को अपने अखबार में दर्ज कर चुके हैं। इस घटना को पढ़के मुझे ऐसा महसूम होता है— किसानों के शोषण में कोई कमी नही हुई है। और यह भी किसानों की समस्याये सारे हिन्दुस्तान में लगभग एक जैसी ही हैं। सदियों से उन पर अत्याचार किया जारहा है। अंग्रेजों से पहिले भी, अंग्रेजों के दौर में भी और अंग्रेजों के बाद भी। हमारे किसानो को अत्याचार करने वाले लोगों से तो बहुत कम

वास्ता पड़ा है। इन अत्याचारी कालों से वे जीवन भर बेज़ार रहते हैं। क्योंकि जागीरदार से लेकर पटवारी तक उन पर अत्याचार करने वालों का ऐक पहिले भी काला था और आज भी काला है। इस लिये जब उनसे कहा जाता है कि अंग्रेज हिन्दुस्तान से चले गये, खुशियाँ मनाओ तो उनकी आँखों में वह चमक पैदा नहीं होती जो आज़ादी के सीशार जज़्बे से पैदा होतीं है।

कसानों पर अत्याचार करने का सिलसिला इतना गहरा मज़बूत और संगठित है, और इसकी जड़ें इस प्रकार शताब्दियों पीछे फैली हुई हैं कि शहरों में रहने वाले भी– जो अपने बड़ों में किसी ऐसी बात को सहन नहीं करेंगे– जिससे किसानों का हररोज़ सम्बन्ध रहता है। वे बड़े सन्तोष के साथ अपने अत्याचारों के किसानों के लिये सही और उचित ठहराते हैं। नैतिरता के वे विभिन्न पैमाने– यहाँ शहरों में भी मौजूद हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो इन बातों को बुरा समझते हैं। लेकिन अपराधी फिर भी किसानों को ही मानते हैं। किसान मूर्ख है– अनपढ़ है, पशु और निकम्मा हैं। सभ्यता और जागरिता से उसका कोई सम्बन्ध नहीं इस लिये उसके साथ ऐसा व्यवहार हौता है"? किसने उसे मूर्ख रखा, उसे अनपढ़ बनाया, उसे सभ्यता से दूर रखा। इन बातों का खोज करने का उनमें साहस नहीं।

लेकिन यदि हमें वास्तव में अपने समाज, अपने जीवन और अपने मआशरे को खुशगवार बनाना है तो इन बातों की खोज करने का साहस करना पड़ेगा। अत्याचारों की

उस रौ को भी देखना पड़ेगा जो एक दो साल से नहीं कई सौ सालों से किसानों के ख़िलाफ़ जारी है। मज़ा तो यह है कि हम लोग इन अत्याचारों को नहीं देखते इसके विरुद्ध कोई रचनात्मक विरोध नहीं करते, किसानों की समस्याओं को हल करने के लिये उनकी कोई मदद नहीं करते लेकिन जब किसान चारों तरफ़ से मजबूर हो कर अपनी मदद आप करने के लिये इन अत्याचारों के विरुद्ध खड़ा हो कर अपनी ज़मीन अपने घर अपनी माँ, बेटी और बीवी के सतीत्व की रक्षा करना चाहता है, जब वह इन अत्याचारों के विरुद्ध अपने जीवन को क़ायम रखने के लिये बचाव के साधन ढूंढ़ लेता है– और उन पर अमल करता है– तो हम उस पर गोली चलाते हैं। उसे उसकी पुरानी हालत मे रखने के लिये उसके गाँव में पुलिस और फ़ौज भेज देते हैं। उनके घरों और फ़सलों को खड़े खड़े जला देते हैं और उस पर हिंसा का व्यंग करते हैं। यह व्यंग स्वयं गोली और गैस से, सरकार और रियासत से, दबाव और हिंसा से- फ़ौज और पुलिस से शासन करने वालों को शोभा नहीं देता।

"जब खेत जागे" में मैंने किसानों के इस नये आन्दोलन को लिया है जो आंधरा की धरती से उठा है– इससे पहले भी किसानों ने अपने अधिकारों के लियें लड़ाइयाँ लड़े है लेकिन इससे पहिले किसानों ने जो लड़ाइयाँ लड़ी थीं उन में उनहोंने अपना सम्बन्ध शहरी जनता से स्थापित

नहीं किया था लेकिन इस बार विशेष रूपसे आंध्रा और दक्षिणी भारत के दूसरे स्थानो में जो किसानों के आन्दोलन उठे हैं उसे शहरी जनता की सहानुभूति भी प्राप्त हुई है। यह इस लिये कि इस आन्दोलन को समाज के सब से अग्रगामी वर्ग नाजी मजदूर वर्ग की राजनैतिक चेतना और उसकी नेतृत्व प्राप्त हुआ, जिसके गण तेलंगान का मोर्चा सारे हिंदुस्तान के किसानों का मोर्चा बनगया और हिंदुस्तान के लोगों में पहिलीबार संगठित रूपसे किसानों की समस्या उनके जहन में अपनी पूरी तीव्रता था निर्भीकता से उजागर हुई। यह समस्या इस सई, तीव्रता और सच्चाई से सामने आया कि दोस्त और दुश्मन दोनों को स्वीकार करना पड़ा कि किसान इस मामले में राही हैं। उसे उसकी ज़मीन वापस मिलनी चाहिये। अब यह अलग बात है कि कुछ लोग उसे राजनैतिक उलझावे दे रहे हैं। ज़मीन के बदले में उससे दसगुना हरजाना मांग रहे हैं जो हिंदुस्तान का ग़रीब किसान दस पुश्तों में भी अदा नही कर सकता। दूसरी तरफ़ श्री विनोबा-भावे हैं जो भू-दान की आन्दोलन चला रहे हैं। वह कहते हैं किसानों को ज़मीन पदान में दे दो। अगर दानसे किसानों की समस्या या ग़रीबों की समस्या हल हो सकती तो अब तक हल होगई होती। दान का नियम यह है कि एक व्यक्ति अपने घर से उतनाही दान देता है– जो उसे अखरे नहीं। जब से उसे यह खैरात अखरने लगी वहीं पर वह अपने हाथ रोक देगा।

"जब खेत जागे" ऐसीही क्रान्तिकारी चेतना रखने

वाले किसानों की कहानी है। जो अपनी धरती की रक्षा के लिये आत्याचारियों की हिंसा के विरुद्ध उठखड़े होते हैं। यह ऐसे किसानों की कहानी है जो स्वयं मेहनत करने वाले हैं। इस लिये शहर के मेहनत करने वाले मजदूर की मदद और नेतृत्व से लाभ उठाने को बुरा नहीं समझते। उन लोगों के दिल में शहरी और देहाती का वह घृणात्मक अन्तर नहीं है- जो आम तौर पर अधिकारियों में पाया जाता है। ये किसान जाग्रत और संगठित हैं। वे न केवल हल चलाना चाहते हैं बल्कि किताबें भी पढ़ना चाहते हैं और प्रेम करना चाहते हैं। और सभ्यता और संस्कृति के सारे खज़ानों से मालामाल होना चाहते हैं। वे दूसरों से दान नहीं चाहते। वह तो यह कहते हैं कि यह ज़मीन तो हमेशा से हमारी है। हमने इसपर मेहनत की। इसमें फल फूल उगाये। इस मेहनत से सारा जहान चलता है। फिर हमहर जागीरदारों का गुआलाद दिया गया। और आज जब हम अपनी ज़मीनें वापिस लेने के लिये संगठित हो हैंते तुम हमसे यह कहते हो कि हम तुम्हे तुम्हारी ज़मीन दान में देगें। या यदि यह भूदान है तो फिर हर चोर और डाकू को दानी कहना पड़ेगा। और फिर तुम शायद हमारी ज़मीन का एक छोटा सा भाग ही दान दे सकोगे। और वह ज़मीन भी थोड़े समय के लिये हमारे पास रह सकेगी। क्योंकि ज़मीन महाजनी दौर में किसानों के पास अधिक दिन तक नहीं रहती। वह कर्जदार और बरबार किसानों से धीरे धीरे फिर महाजनों और जागीरदारों की तरफ सरक जाती है। यह इस आर्थिक व्यवस्था का नियम है।

"जब खेत जागे" ऐसे ही जाग्रत किसानों की कहानी है। स्थितिस्थान आंधरा की धरती है। इस कहानी के कहने में उन दोस्तों का बहुत हाथ है जो किसान आन्दोलन में काम करते हैं या उसके सांस्कृतिक विभागों से सम्बन्धित रहे। इस आन्दोलन से सम्बन्धित जो साहित्य भी मुझे मिला वह बड़ी कठिनाई से प्राप्त हुआ, क्योंकि हालत विरुद्ध थे। बहुत सी जानकारी तेलगू भाषा के प्रसिद्ध नाटककार और कवि भास्करराव से प्राप्त हुई। उपन्यास के हीरो राघवराव को यह नाम मैंने दिया है वह विट्टी है यानी खेत मज़दूर है– इस लिये उसका यह नाम नहीं हो सकता भास्करराव ने मुझे बताया था। विट्टियों के नाम रामूलू थ्यामलू रंगडू रखते हैं– लेकिन राघवराव नहीं क्योंकि राघवराव तो राजपूती नाम है– राघव पति हमारे श्री रामचन्द्रजी थे।

इस लिये मैंने सोचा कि मेरे नये हीरो का नाम भी नया होगा। क्योंकि जिस प्रकार दुष्टों ने किसानों की ज़मीन जब्त करली थी उसी तरह उनसे अच्छे नाम भी छीन लिये थे। और आज जब वह अपनी पुरानी ज़मीन वापिस ले रहा है– तो उसे अपने पुराने नाम भी वापिस लेने चाहिये।

इस लिये मेरे हीरो का नाम "राघवराव" है।

क्योंकि जो आज विट्टी हैं वह रामराजा होंगे।

"जब खेत जागे" आजसे उदय होते हुये कल की कहानी है। मैंने अभी उसका एक कोना देखा है। अभी बहुत कुछ और देख कर लिखने की इच्छा हैं।

कृष्णचन्द्र

राघवराव की आयु बाईस वर्ष की थी। आज जेल में उसकी अन्तिम रात्रि थी। कल सुबह उसे फाँसी दी जानें वाली थी।

काल कोठरी में लेटे लेटे राघव राव ने पीछे मुड़ कर देखा– अपने समस्त जीवन की ओर। बड़े सावधानी से अपने संक्षिप्त जीवन के एक एक क्षण की गणना की।

जैसे किसान अपनी नकदी को तौली में रखने से पूर्व भली प्रकार उलट पलट कर देखता है, ठीक उसी प्रकार उसी सावधानी सतर्कता और शंका के भाव से राघवराव ने अपने जीवन के क्षणों को उलट पलट कर देखा क्यों कि इन सिक्कों को उसने स्वयं अपने हाथों से ढ़ाला था। निःसन्देह कुछ क्षण उसके माता पिता की देन थे— जैसे उसका जन्म, माँ की लोरी, पिता का कन्धा। कुछ क्षण समाज की टकसाल से ढल कर आये थे। परन्तु फिर भी जीवन के बहुत से क्षण, क्षण जो सब से अच्छे थे, सब से उत्तम थे, सब से मूल्यवान और सुन्दर थे, वे सब उसके अपने थे। उसने ही उनको अपनी इच्छानुसार और अपने परिश्रम द्वारा सुन्दर साँचों में ढाला था। अर्थात् जो कुछ वह था, जो कुछ उसने सोचा था, जो कुछ उसने किया था, जिस प्रकार उसका क्रमिक विकास हुआ था, उस पर पूर्ण रूप से उसके व्यक्तित्व की गहरी छाप थी। उस पर किसी दैविक शक्ति की छाया न थी।

फिर भी प्रत्येक मनुष्य के जीवन के कुछ सिक्के खरे होते हैं और कुछ खोटे भी निकल आते हैं और उनको परख करना आवश्यक होता है। अपने लिये न सही, दूसरों के लिये ही सही ओर आखिर दूसरे भी तो अपने होते हैं। इस लिये, यद्यपि राघव राव के लिये समय समाप्त हो चुका था, फिर भी अन्तिम विश्लेषण करने के लिये अपने भूत काल की ओर मुड़ गया और उसके चौड़े मस्तक पर

गहरी रेखाएं बन गईं, यद्यपि उसके पैरों में डण्डा बेड़ी थी और उसके हाथ लोहे की हथकड़ियों में जकड़े हुए थे, फिर भी उसका मस्तिष्क और उसकी कल्पना समस्त शारीरिक बन्धनों से मुक्त हो कर बड़ी निश्चिन्तता से बीते हुए क्षणों के खोटे खरे की परख करने लगी।

इस अवसर पर कोई दूसरा होता तो इसे समय काटने का बहाना समझता। परन्तु राव उन लोगों में से नहीं था जो समय को भूमण्डल का चौखटा और इस लिये मनुष्य का स्वामी समझते हैं। राघव राव ने बड़ी खोज के पश्चात् इस सत्य को पाया था कि समय, मनुष्य के हाथ में कच्ची धातु की भांति है, जिसे मनुष्य अपनी इच्छानुसार ढाल सकता है, जिसमें अपना परिश्रम मिला कर ससांर को बदल सकता है। स्वयं राघवराव ने छोटे पैमाने पर ऐसा ही किया था। इसमें उसे कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई, कहाँ तक असफलता मिली, इसे वह इस समय अपने अन्तिम क्षणों में परखना चाहता था। इस लिये उसने अपने जीवन के सब सिक्के अपने सामने फैला लिये और उन्हें एक एक करके उठा कर देखने लगा।

यह उसकी माँ थी, जो उसे तीन वर्ष का छोड़ कर मर गई थी। उसकी बहुत ही धुंधली स्मृति उसके मानस-

पट पर रह गई थी। वह बड़ी बड़ी गहरी काली आँखें, छाती का कच्चा दूध उसके होंटों तक फैलता हुआ, एक नर्म और गर्म गोद और उसका माँ की छाती पर हाथ रख कर सो जाना। बस इतनी ही याद थी। राघव राव ने इस सिक्के को बड़े प्यार से चूमा और उसे एक ओर रख दिया।

यह उसका पिता था, वीरैया। वीरैया जो माँ भी था और बाप भी था, मित्र भी था और साथी भी था, उसके कन्धे से कन्धा मिला कर संघर्ष करने वाला भी था और गुरू भी था। बहुत से व्यक्तित्व वीरैया में आकर एकत्रित हो गये थे। अच्छा होता यदि राघवराव को यह सब व्यक्तित्व अलग अलग और व्यक्ति गत रूप से मिलते। इस से जीवन अधिक मनोरंजक अधिक गहरा और अधिक सुन्दर हो जाता। परन्तु कुछ सिक्के समाज और वाता वरण के भी होते है जो अनिवार्य रूप से जीवन की मुट्ठी में डाल दिये जाते हैं और मनुष्य को इन्हें अपने साथ लेकर इन्ही से अपने जीवन का निर्माण करना पड़ता है। वीरैया एक कमेरा था, वह विट्टी था, वह बेगार पर जाता था, वह इतना ग़रीब था कि दूसरा विवाह न कर सकता था, वह अपने बच्चे को स्कूल न भेज सकता था। इन

बातों नें यदि वीरैया को अपने बच्चे की माँ, उसका स्कूल और उसका साथी बना दिया तो इसमें किस का क़सूर है।

राव ने इस सिक्के को उलट पलट कर देखा जिस पर उस के पिता की तसवीर थी। वीरैया का शरीर गठा हुआ था, उसका सिर मुंडा हुआ था उसकी आखें छोटी छोटी थीं और उसके पैर नन्गे काले और मज़बूत थे। उसके पैरों को जूतों की आवश्यकता न थी। बड़े हो कर राघव राव के पैर भी ऐसे ही हो गए थे। राघव राव ने अपने पैरों की ओर देखना चाहा परन्तु वे डण्डा बेड़ी में जकड़े हुए थे– वह धीरे से मुस्कराया।

वीरैया ने राघव राव को कठोर और कष्ट सहने वाला बना दिया था क्यों कि वह उसका पालन पोषण एक माँ की भांति न कर सकता था। वैसे एक खेतों में काम करने वाली माँ भी अपने बालक को माँ की भांति नहीं पाल सकती। और वीरैया को तो जीवन में सुबह से शाम तक परिश्रम ही परिश्रम करना पड़ता था क्यों कि उसकी अपनी भूमि नहीं थी। भूमि ज़मीदार की थी और वे लोग ज़मीदार के खेत के मजूर थे, उसके विट्टी थे, उसके ग्वाले थे उसके घोड़े थे और समय पड़ने पर उसके मुर्ग़े भी थे और अपनी बहू बेटियों के दलाल भी थे। जब एक मनुष्य को अपना जीवन बिताने के लिये इतना कुछ

करना पड़े तो यदि वह अपने बेटे को कड़ियल और परिश्रमी न बनाये तो समझो कि उसने अपने बेटे के साथ ग़द्दारी की है।

परन्तु वीरैया और सब कुछ था, वह एक ग़द्दार पिता नहीं था। इस लिये राघवराव ने बाल्य काल से भूखा रहना, नंगा घूमना और भूखे नंगे रह कर जीवन के नीरस पहलुओं से किसी न किसी प्रकार थोड़ा सा रस खींच लेना सीख लिया था। इस से अधिक की उस में चाह न थी या शायद थी परन्तु समाज के सिक्के इतने खोटे थे कि उसकी अभिलाषा और कामना के बाज़ार में देर तक न चल सके। उदाहरण स्वरूप उसे ठीक से तो याद नहीं था परन्तु इस बात का एक धुधंला अस्पष्ट सा चित्र उसके मस्तिष्क में सुरक्षित था कि जब वह बहुत छोटा सा था और जनवरी के महीनें में सुबह के समय भी बिस्तर पर पड़े रहना चाहता था, जब उसका शरीर घन्टों नींद का इच्छुक होता, उस समय उसका पिता उसे अपनी पीठ से बांध कर ज़मींदार के रूई के खेतों में काम करने के लिये चल देता था। राघवराव घन्टों रोता रहता और घन्टों राघवराव का पिता अपने रोते हुए बालक को पीठ पर लादे, पसीने में लथ पथ खेत में रूई के फूल चुनता रहता, यहां तक कि बालक ने रो रो कर चुप हो जाना सीख लिया, दूध के स्थान पर अन्नम और गूंग गोरा के पत्तों की चटनी खाना सीख लिया, स्वयं अपने हाथों से

रोटी बनाना सीख लिया। एक लम्बी अवधि के लिये जब तक उसे खेतों में काम करना नहीं आया, वह अपने पिता के लिये स्वयं रोटी पका कर खेतों में ले जाता रहा। यह बहुत कठिन कार्य न था। पहले तो वह बाजरे को चावल की भांति पानी में उबाल लेता, फिर थोड़ी सी चटनी पीस लेता, फिर वह दोनों को केले के पत्ते में लपेट कर खेतों मे अपने पिता के पास ले जाता जहाँ कभी २ ज़मींदार के घर से लस्सी आ जाती। लस्सी और चटनी के साथ अन्नम खा कर थकी हुई भुजाओं में बल आ जाता था और वीरैया खेतों से फ़सल काटने लगता और राघवराव काटी हुई फ़सल को एकत्रित करने लगता। फिर वह दिन भी आगया जब राघवराव ने बीज बोना, फ़सल काटना और दोनों से वंचित होना सीख लिया। अब वह पूरा कमेरा बन गया और उसकी शिक्षा पूर्ण हो गई और उसके विट्टी पिता ने बड़े गर्व से अपने विट्टी पुत्र की ओर देखा जैसे बोझा उठाने वाला गधा बड़े स्नेह से अपने बोझा उठाने वाले गधे बेटे की ओर देखता है। पिता का स्नेह इस में है कि पुत्र के बोझा को तनिक कम कर दे और पुत्र का प्यार इसमें है कि वह पिता के बोझा को अपने ऊपर ले ले और ज़मींदार का धंधा इस में है कि वह दोनों पर धीरे २ बोझा बढ़ाता जाय।

राघवराव ने इस सिक्के को उलट पलट कर फिर देखा। कितनी ही बातों में वह अपने पिता से मिलता था। पिता का कद, पिता का रंग, पिता की निर्धनता। वह अपने क़द और रंग को तो न बदल सकता था और न इसकी उसमें इच्छा थी, परन्तु अपनी निर्धनता को उसने अवश्य बदलना चाहा था और उसकी यह अभिलाषा कोई युवा-काल में नहीं बहुत पहले बाल्य-काल में पैदा हुई थी, जब उसने कुछ बालकों को स्कूल जाते हुये देखा था। किताबें और स्कूल और अच्छे वस्त्र, इन वस्तुओं के प्राप्त करने, उन्हें छूने और उन्हें प्यार करने की प्रबल इच्छा उसके मन में उभड़ आई। परन्तु वीरैया ने शीघ्र ही अपने पुत्र को समझा लिया कि ऐसा होना असम्भव है। विट्टी का पुत्र, विट्टी होता है जैसे ज़मींदार का पुत्र ज़मींदार होता है और नम्बरदार का पुत्र नम्बरदार होता है और पुरोहित का पुत्र पुरोहित होता है। इसी प्रकार कुछ बालक स्कूल जाते हैं और कुछ बालक खेतों में फ़सल काटते हैं और इसमें कोई आपत्ति जनक बात नहीं है। हज़ारों वर्षों से ऐसा चला आया है और हज़ारों वर्ष तक ऐसा चलता रहेगा। राघवराव यह सुन कर चुप हो गया और पिता ने समझा कि पुत्र ने पिता की भांति हार मान ली। परन्तु वास्तव में क्या ऐसा ही हुआ?

यहाँ राघवराव ने अपने जीवन का एक और क्षण

उठा लिया। जब वह ग्यारह वर्ष का था तो उसके गाँव श्रीपुरम में मेला लगा– यह मेला इस गांव में हर दस वर्ष के बाद लगता था। श्रीपुरम के नारियल के पत्तों से छते हुये मकानों में हर्ष और उल्लास की लहरें उमड़ने लगीं। वीरैया ने भी प्रथम बार अपने पुत्र को नये वस्त्र पहनाये खद्दर की धोती, खद्दर का कुर्ता और सिर पर खद्दर की पगड़ी और गले में लाल धागा और एक टोटके का मनका जो उसे किसी साधू ने दिया था। उस दिन राघवराव भोगावती नदी में स्नान करके और उजले वस्त्र पहन कर बड़ा प्रसन्न हुआ फिर वह शीघ्रता से अन्नम और परवा खा कर अपने पिता के साथ गाँव के मध्य में खुले स्थान की ओर चल दिया जहाँ मेला लगता था। मार्ग में वृक्षों के तले बालक बलंग गोड़ी और छडू गडू खेल रहे थे। एक बूढ़े बरगद के नीचे बालिकाएँ टूट खेल रही थीं। आगे जाकर वत्स बण्डे की पथरीली ऊंची भूमि शुरू हो गई जहाँ मेला लगा था। मेले में बंजारे बर्तन ले कर आये थे चूड़ियां, कंघियाँ और तेल ले कर आये थे। तम्बाकू और गुड़ लेकर आये थे। छोटे २ बालकों के लिये मिट्टी के खिलौने, ताड़ के बोरे और बुम्बें ले कर आये थे और एक ओर जापानी रेशम की दूकान थी। उस दूकान में राघवराव बहुत समय तक खड़ा रहा। क्या कपड़े इतने सुन्दर भी हो सकते हैं? इतने मोहकर और कोमल? उसे याद है कि उसने

आगे बढ़ कर रेशम के एक थान को अपने हाथों से छू लिया था। क्या यह सत्य है कि कपड़े मनुष्य के स्वप्नों की भांति इतने कोमल, चिकने और चमकदार हो सकते है। इस लिये उसने एक क्षण के लिये उन्हें छू कर देख लिया और उसका वह वर्षों पुराना स्पर्श आज भी इस समय काल कोठरी में एक सुनहरी सिक्के की भांति 'छन' से बोल उठा। बहुत समय तक राघवराव इस क्षण की संगीत मय झंकार सुनता रहा।

और फिर उसे याद आया रमैया चैट्टी नें उसे झिड़क दिया था– "अरे विट्टी हो कर रेशम को हाथ लगाता है दुष्ट, खड़े खड़े खाल खिचवा दूंगा।" ठीक उसी समय उसके पिता विरैया ने अपनें पुत्र का हाथ रेशम के थान से खींच लिया और अपने पुत्र को लेकर आगे बढ़ गया। परन्तु राघवराव को बड़ा धक्का सा लगा। उसने अनुभव किया जैसे जीवन की नग्नता उसके लिये हैं। जीवन का रेशम, उसकी कोमलता और उसकी चमक उसके लिये नहीं है। और राघवराव ने फिर हथेली पर एक खोटे सिक्के को देखा जिसे वह अपनी कामनाओं के बाज़ार में किसी प्रकार न चला सका, न उलट कर, न पलट कर। यह सिक्का न उसका था, न उसकें पिता का न उन दोनों कें परिश्रम का। यह समाज की दैन था। सहसा राघवराव का चित खिन्न हो गया। पिता कें बहलानें पर भी वह न बहला।

जब पिता ने उसे झूले पर चढ़ाया और फिर गुड़ का शरबत पिलाया तो उसका जी कुछ बदला। परन्तु फिर भी देर तक उसका मन रेशम के रंगीन कपड़ों के लिये मचलता रहा।

सन्ध्या समय जब पिता और पुत्र मेले से लौट रहे थे तो उन्हे पटेल के कारिन्दे और दुर्गैया मिले। दोनों की आखे नशे से लाल थीं, दोनों के हाथ में पिस्तौल थे। उन्हों ने पिता और पुत्र को देखते ही घेर लिया। विरैया ने पूछा– "क्यों कुशल तो है?"

दुर्गैया बोला– सीधे सीधे चलोगे तो कुशल ही है।"

"कहाँ जाना होगा?" विरैया ने पूछा।

"बेगार के लिये, सूर्यापेट, अभी, इसी समय। जमींदार ने बुलाया है।"

परन्तु आज तो मेला है" राघवराव ने पिता से चिपट कर कहा।

भीमैया ने राघवराव को गले से पकड़ लिया। उसके गालों पर तमाचे लगाए, उसकी पगड़ी उतार कर धूल

में फेंक दी और उसके नये कुरते को दोनों हाथ से चीर डाला और उसकी धोती खोल कर उसे नंगा कर दिया।

राघवराव ने विरोध किया। परन्तु भीमैया बहुत बलवान था और वह अभी बालक था। इस लिये जब भीमैया ने उसकी छाती पर पिस्तौल रख दिया तो विरैया ने भाग कर उसके हाथ पकड़ लिये और गिड़गिड़ा कर बोला– "मालिक यह तो बालक है। इसे क्या पता कि हम विट्टी हैं, सरकार के गुलाम हैं। भरे मेले से भी ज़मींदार के बुलाने पर चले आयेगें।"

"क्यों चले आँयगें" राघवराव क्रोधित स्वर में बोला। "चुप वे" विरैया ने अपने पुत्र को एक घूंसा लगाया। राघवराव के मुहं से रक्त बहने लगा। विरैया नें आज तक अपनें पुत्र को कभी न मारा था। इस लिये राघवराव विस्मित हो कर अपने पिता की ओर देखने लगा। उसनें बहते हुये रक्त को पोंछने का प्रयत्न नहीं किया। हाँ जब रक्त ठोड़ी से नीचे बह चला तो उसनें उसी भांति पिता की ओर विस्मित नेत्रों से तकते तकते अपनें हाथ से अपना रक्त पोंछ लिया और इसके पश्चात् जो रक्त बहा उसे चुपके से पी लिया। कुछ पी गया कुछ थूक दिया परन्तु बोला कुछ नहीं।

वीरैया ने अपने पुत्र को गाली देकर कहा– "चलिये

मालिक, मैं विट्टी हूं। मैं मालिक की बेगार करूंगा। मेरा बेटा भी विट्टी है। वह भी चलेगा। भला हम विट्टी लोगों को मेले ठेले से क्या मतलब।"

"अब लीछा हुआ है जा कर कहीं, साला नये कपड़े पहन कर हमारे सामने आता है"– भीमैया आगे बढ़ते हुये बोला। दुर्गैया, राघवराव को धक्का दे कर आगे चलाने लगा।

विरैया ने हाथ जोड़ कर कहा– "बड़ी भूल हुई मालिक। मैं तो मना कर रहा था पर यह दुष्ट न माना। कहने लगा आज मेला है, आज नये कपड़े पहनूंगा।"

"तू जानता नहीं, मालिकों के सामने कोई नये कपड़े नहीं पहन सकता।

"जानता हूँ मालिक"

"फिर?"

"मालिक क्षमा करदो, आगे से फिर ऐसी भूल नहीं होगी।"

भीमैया ने कहा– "इसी लिये मैने इसके कपड़े फाड़ डाले हैं। आगे से यह ऐसी भूल नहीं करेगा। विट्टी को विट्टी की भाँति रहना चाहिये"

"ठीक कहते हो मालिक।"

भीमैया और दुर्गैया ने मेले और गाँव से पचास साठ अन्य विट्टी एकत्रित किये और उन्हें रेवड़ की भांति हांक कर ज़मीदार की ड्योढ़ी पर ले गए।

ज़मींदार की बन्कू बहुत ऊँची थी। उसका द्वार बहुत ऊँचा था और अन्दर ज़मीदार का निवासगृह था जिसे आज तक किसी विट्टी ने न देखा था। राघवराव का बन्कू पर जाने का यह प्रथम अवसर था। बन्कू को उसने दूर से देखा था। एक दो बार साहस कर के वह उसके समीप से भी गुज़रा था जहाँ सन्तरी पहरा देते थे। परन्तु बन्क के भीतर पग धरने का साहस उसे कभी न हुआ। बालक में जिज्ञासा और खोज की जो प्रवृति होती है वह राघवराव के मन में भी थी। इस लिये पिट जाने पर भी, कपड़े फट जाने पर भी ज़मीदार और ज़मीदार की भव्यशाली बन्कू का भय होने पर भी वह बड़ी उत्सुकता से बन्कू के इधर उधर देखने लगा। सहसा उसके पिता ने उसकी गर्दन को पकड़ कर बल पूर्वक नीचे झुका दिया "ऊपर मत देख, पैरों में देख नहीं तो मालिक रुष्ट हो जाँयगे।"

उस समय राघवराव ने पलक झपकने में देख लिया कि सब विट्टी सिर झुकाए, हाथ जोड़े, पैरों में दृष्टि गड़ाए, पंक्तियों में खड़े हैं।

फिर राघवराव के कानों में एक कर्कश स्वर आया– "दुर्गैया।"

"जी मालिक" दुर्गैया ने उत्तर दिया। परन्तु राघवराव भय के मारे ऊपर न देख सका।

"कितने विट्टी लाये हो ?"

"दो कम साठ लाया हूं मालिक।"

"अच्छा काम चल जायगा। परन्तु खाने का भी प्रबन्ध करलो। इन को बहुत दूर जाना है।"

भीमैया बोला– "ये लोग खाना साथ लाए हैं मालिक।" और विरैया ने मन में सोचा यह तो सफ़ेद झूठ है।

"अच्छा अच्छा तो चलो, तैयारी करो।" फिर वही कर्कश स्वर सुनाई दिया।

फिर भीमैया और दुर्गैया सब विट्टियों को उलटे पैरों बन्कू से बाहर लाए और उनपर सामान लादने लगे। सामान बहुत था क्यों कि सूर्यापेट में जमीदार के पुत्र की सगाई थी। चार तो पालकियां थीं एक जगन्नाथ रेड्डी जमीदार के लिये जो श्रीपुरम, पत्ति पाड़ो और निकट वर्ति चालिस गावों का एकमात्र स्वामी था। दूसरी पालकी जगन्नाथ रेड्डी के पुत्र प्रताप रेड्डी की थी जिसकी सूर्यापेट में सगाई थी। तीसरी पालकी प्रताप रेड्डी की माता की थी जिसका इस अवसर पर सूर्यापेट जाना अत्यावश्यक था। पहली दो पालकियां खुली हुई थीं, तीसरी बन्द थी और चौथी पालकी भी बन्द थी। परन्तु यह चौथी पालकी बिल्कुल नयी, नक्काशीदार थी और इसके दो

तरफ़ लाल २ रेशम के काढ़े हुए पर्दे पड़े थे जो पवन के हल्के झोंके से लहरा उठते थे और उनके सिरों पर टकी हुई काँच की लड़ियाँ ऐसे झनझना उठती थी जैसे टूट खेलते समय बहुत सी लड़कियाँ एक साथ हंस पड़े। राघवराव ने बड़े विस्मित और मुग्ध भाव से इस बन्द पालकी की ओर देखा और अपने पिता से इस सम्बन्ध में प्रश्न भी किया परन्तु अपने पिता से उसे अपने प्रश्न के उत्तर में घूसे के अतिरिक्त कुछ न मिला।

डेढ़ दो घन्टे की तैयारी और कोलाहल के पश्चात् ज़मीदार का क़ाफ़िला बन्कू से चला। आठ विट्टी प्रत्येक पालकी के साथ थे। पहली पालकी मालिक की, दूसरी पालकी मालिक के पुत्र की, तीसरी मालिक के पत्नी की और चौथी पालकी ख़ाली थी। राघवराव को पता न लग सका, क्यों? बीरैया की ड्यूटी मालिक की पालकी उठाने पर थी। राघवराव को एक बहुत बड़ा दर्पण उठाने को मिला था जिसमे वह बार बार अपना मुंह देखता था और प्रसन्न होता था। परन्तु दर्पण उठाने पर भी वह चौथी पालकी के निकट ही चलता रहा। इस पालकी के उठाने वालों में अगंडू विट्टी भी था जो उसके पिता का मित्र था। इस लिए राघवराव उसके साथ साथ चलता रहा और जब उसने देखा कि तीसरी और चौथी पालकी में अन्तर कुछ बढ़ गया है तो उसने इधर उधर देख कर

अगंडू के छोरे से पूछा– "चाचा यह खाली पालकी किस के लिये है।"

"मुझे क्या मालूम" अगंडू ने क्रोधित हो कर उत्तर दिया।

"बताओ ना चाचा" राव ने सविनय अनुरोध किया।

अगंडू आज बहुत क्रोध में था क्यों कि ज़मीदार के कारिन्दे उसे मेले से उठा कर लाये थे। वर्ष के सब दिन मालिक के होते हैं परन्तु मेले का दिन विट्टी का होता है। इस कारण अगंडू आज किसी बात का ठीक प्रकार से उत्तर न देना चाहता था। परन्तु बालक की उत्सुकता और भोलापन देख कर उसका मन भी पसीज गया।

अगंडू ने इधर उधर देख कर कहा– इसमें ज़मीदार की माँ की बहन (गाली देकर) आयेगी।"

"कौन?" राव कुछ न समझा।

उसके बेटे की (गाली देकर) माँ की (गाली देकर) वह (गाली देकर) आयेगी।

राव फिर भी कुछ न समझा। वह विस्मय से अगंडू की ओर देखने लगा।

अगंडू ने धरती पर थूक कर कहा– "इसमें आज से एक वर्ष बाद, जब मालिक के बेटे का विवाह होगा, तो उसकी दुलहन सूर्यापेट से श्रीपूरम लाई जायगी। उस समय भी तुझे और मुझे ही चाकरी के लिये जाना होगा।"

ज़मीदार के एक कारिन्दे ने आकर अगंडू को जोर का टहोका दिया– "बातें करेगा या आगे भी चलेगा।

देखता नहीं है, तीसरी पालकी कितनी आगे निकल गई है।" अगंडू और अन्य विट्टी पालकी को उठाये खच्चरों की भाँति बगडर भागे। राघवराव भी दर्पण उठाये तीव्रता से भागा।

श्रीपुरम से सूर्यापेट का सफ़र बहुत कठिन था। परन्तु राघवराव को इस सफ़र की दो बातें कभी न भूलेंगी। एक तो जब उसने गाँव से दूर जाकर, एक पहाड़ी मार्ग पर चढ़ कर, चोटी के नाके से मुड़ कर अपने गाँव को देखा था। उसके दर्पण में उसका गाँव चमक रहा था—रुई के फैले हुए खेत, रुई जो आँधरा की बर्फ़ है, नारियल के पत्तों से छते हुए घर, घरों के बीच में काली चट्टानों का वत्स बण्डा, जहाँ अभी तक लोग झूला झूल रहे थे और वत्स बण्डा से परे वेपा और चिन्ता के वृक्षों के झुण्ड जहाँ सन्ध्या के बढ़ते हुए श्यामल धुधलकों में पक्षी बसेरा करने के लिये जा रहे थे। राघवराव को समस्त कष्टों, कठिनाईयों ओर क्लेशों के होते हुए भी अपना घर, अपना गाँव, अपना तालाब अत्यन्त सुन्दर प्रतीत हुआ। आज तक उसने अपने घर और गाँव को इतने दूर से न देखा था। इस लिये जीवन का वह सौन्दर्य जो दूरत्व उत्पन्न कर देता है, आज उसके मन के दर्पण में

चकाचौंध पैदा कर गया। इस घर, गाँव और भूमि के सौन्दर्य की मृदु स्मृति कभी राघवराव के मन से न मिट सकी। आज भी काल कोठरी की चार दीवारी में नेत्र मूंद कर वह उस सौन्दर्य का दर्शन कर सकता था। उसे इस सौन्दर्य के परखने का, स्पर्श करने का, भस्म कर देने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था क्योंकि वह जीवन भर इसके लिये संघर्ष करता रहा था।

दूसरी बात जो इस सफ़र की याद रही वह इस गाँव से सम्बन्धित न थी। वह बात उस रात को सूर्यापेट में एक बड़े अस्तबल में उसने अनुभव की। उस अस्तबल में गाँव के पटवारी श्री रामा पुतलू और गाँव के पुरोहित श्री सियाराम शास्त्री और गाँव के पुलिस पटेल लक्ष्मीकान्तराव और अन्य प्रतिष्ठित अतिथियों के घोड़े बांधें गए थे। यही गाँव के विट्टियों को ठहरने का स्थान दिया गया था। परन्तु जो बात उसने याद रखी जो उसके मन में उतर गई वह न घोड़ों की लीद थी, न अस्तबल की गंदगी, न नंगी धरती की शीतलता और कठोरता। वह बुर्रा कथा थी जो उसने उस रात अस्तबल के चौक में पत्तीपाड़ो के कथाकारों से सुनी थी। ये कथाकारे भी जगन्नाथ रेड्डी की सम्पत्ति थे और यहाँ सगाई के शुभअवसर पर बुलाए गए थे। ये तीन व्यक्ति थे। एक सफ़ेद डाढ़ी वाला व्याख्याता था जिसका मुखमण्डल दिये के प्रकाश में आँधर की लाल धरती की भांति

ज्योतिमान था। उसके मुख पर उतनी ही झुर्रियाँ थीं जितने आँधरा की छाती में घाव थे। इसके हाथ में एकतारा था। दूसरा व्यक्ति एक बहुत बड़ी पगड़ी बांधे हुए एक युवा विदूषक था जिसके मुख पर जीवन का प्रकाश ऐसे झलक रहा था जैसे शहद से भरे छते में शहद। उसने मानो जीवन की विपदाओं और विभीषिकाओं से परास्त होना सीखा न था। यह विदूषक कथा में हास्य की सामग्री जुटाता था और कथा के बीच में बोल बोल कर, उलटे सीधे प्रश्न पूछ कर लोगों को हंसाता था। तीसरे कथाकार के हाथ में बुर्रा था जो मृदंग की भांति बजता था।

जब रात्रि सघन हो गई और चारों ओर निस्तब्धता का राज्य स्थापित हो गया और घोड़ों ने सूखे बाजरे और विद्वियों ने उबले हुए बाजरे से अपने पेट भर लिये, तो कथाकारों ने घोड़ों के पानी पिलाने के तालाब के किनारे दिये जलाये और उनके मद्धिम प्रकाश में कथा आरम्भ की।

कथाकारोंने मृदंग बजा कर कहा—

आजसे बहुत पहले,

हास्यकार ने पुट दी— जब जगन्नाथ रेड्डी का अस्तित्व न था।

कथाकारोंने मृदंग बजा कर कहा—

बहुत बहुत पहले,

हास्यकार ने कहा— जब विट्टी लोग सफ़ेद चावल खाते थे और सफ़ेद रेशम पहना करते थे।

कथाकार बोले — आजसे कोई सौ वर्ष पूर्व, जब वारँगाल में काकित्य राज्य स्थापित था और उर्मा देवी का शासन था, उस समय बेलम पल्ली के गाँव के निकट एक जोगी रहता था ....

कथा आरम्भ हो गई। मृदंग और एक तारा और हास्यकार की चुटकियाँ। राघवराव बहुत दूर, विशाल आँधरा की प्राचीन वैभवशाली धरती पर पहुच गया। विट्टी लोग अपना सारा सुख दुख भूल कर कथा में खो गए। कथा में एक युवा योगी था, एक सुन्दर राजकुमारी थी। राजकुमारी का पिता वैष्णव मत का पुजारी था योगी शिव का उपासक था। योगी संसार में अत्याचार का अन्त करने चला था और अपने इस नये मत का प्रचार करने चला था कि मार्ग मे उसे राजकुमारी मिल गई ....!

बहुत देर तक व्योम में एक तारे के सुर सरसराते रहे। देर तक राजकुमारी की मुखा कृति विट्टियों की फैली हुई पुतलियों में डोलती रही, देर तक दियों की लौ

तालाब के पानी में झिलमिलाती रही, देर तक तारे आकाश पर पलक झपकते रहे और राघवराव को सुध न रही कि वह कब तक जागता रहा, कब सोया। उसे केवल उस समय सुध हुई जब कि दूसरा दिन चढ़ आया रात का सपना टूट गया और सूर्य की पहली किरण ने उसकी आँखों को जगाने के लिये गुदगुदाया। राघवराव हड़बड़ा कर शीघ्रता से उठ बैठा। उसने देखा उसका पिता अभी तक सो रहा है और अस्तबल के घोड़े हिनहिना रहे हैं और बार बार तुनक मिज़ाजी से अपने सुम धरती पर पटख़ रहे हैं।

इस के पश्चात् राघवराव के मस्तिष्क में बहुत देर तक शून्य रहा। कहीं २ जीवन के धीमे २ सुर, छोटी २ घृणाएँ छोटे २ बुलबुलों की भाँति फूट रही थीं। परन्तु उसने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। इन घृणाओं में जगन्नाथ रेड्डी, पुलिस पटेल, और गाँव के अन्य मालिकों की सूरतें बार बार सामने आकर विलीन हो जाती थीं। इन घृणाओ की ओर उसने इस समय अधिक ध्यान नहीं दिया यद्यपि उसे ज्ञान था कि उसके मन में जो गुल बूटे उगे हैं, उनके लिये घृणाओं की खाद ही डाली गई है।

परन्तु वह "घृणा, घृणा के लिये" वाले सिद्धान्त का समर्थक नहीं था। इस लिये वह बहुत से क्षणों को फलाँग कर आगे बढ़ गया। बहुत से सिक्कों को उसने हाथ लगा कर छोड़ दिया और बाल्य–काल से युवा–काल में भाग आया। और यहाँ पर उसे अपना मित्र नागेश्वर याद आया जो उसके निकट ही एक अन्य काल कोठरी में बन्द था।

नागेश्वर, राघवराव की भाँति मझले क़द का न था बल्कि छः फुट से निकलता हुआ था। जितना नागेश्वर का क़द ऊंचा था, उतनी उसकी लाठी ऊंची थी, उतना उसका क़हक़हा ऊँचा था। नागेश्वर भोगावली नदी के उस पार बन में गाय भैंसे चराता था, गीत गाता था और जब कभी राघवराव को विट्ठी के काम से भागने की आवश्यकता होती तो नागेश्वर उसे अपने यहाँ शरण देता। नागेश्वर और राघवराव की मित्रता, शत्रुता से आरम्भ हुई थी। नागेश्वर को ज़मींदार से इस लिये घृणा थी कि वह वर्ष में दो चार बार पैसा दिये बिना, उसकी भेड़ बकरियां मंगा लेता था। राघबराव को ज़मींदार से इस लिये घृणा थी कि वह विट्ठी था और उसका पिता विट्ठी था। परन्तु वीरैया ने उसे बताया था कि कभी वे लोग ज़मींदार के विट्ठी न थे। कभी उनके पास भी ज़मीन थी, हल था, बैल थे, रुई के गाले थे, अनाज की सुनहरी बालियां थीं, आँगन में हंसते हुये बच्चे और गीत गाती हुई बहुएं,

थीं। और फिर वीरैया ने अत्यन्त घृणा और कामना के बीच यह कहा था 'वह सामने जमीदार की वैभवशाली बन्कू देखते हो' मेरे बेटे राघव इस बन्कू ने हमारा सब कुछ चुरा लिया है। हमें मनुष्य से पशु बना दिया है। मेरे बेटे यह ऊँची बन्कू हमारे वंश का शत्रु है। मेरे बेटे, मेरे पिता ने मुझे यह घृणा सौंपी थी। आज तू बड़ा हो गया है। अब यह घृणा मैं तुझे सौंपता हूँ। लोग अपने बेटों को सम्पत्ति देते है, घर देते हैं, बहू देते हैं भूमि देते हैं। मेरे पास इनमें से कुछ नहीं है, केवल यह घृणा है जिसे मैं तुझे सौंपता हूँ। मैं बोझा उठाते उठाते बुड्ढा हो चुका हूं, मेरे पास शक्ति नहीं है, शक्ति प्राप्त करने के मार्ग का ज्ञान भी नहीं है। केवल यह घृणा है जिसे मैं तेरे हवाले करता हूं। यदि कोई ढूंढ सकता है तो ढूंढ ले।

उस दिन से राघवराव ने उस पवित्र घृणा को एक पवित्र पैत्रिक सम्पत्ति के रूप में उठा कर अपने अन्तर में रख दिया था। अपने जीवन की अनुभूति से इस में वृद्धि भी की थी। दैनिक जीवनने उसे बता दिया था कि जमीदार की बन्कू केवल उसके वंश की शत्रु नहीं है बल्कि रामलू, अगंडू, सोमअप्पा वेन्कटराव और अन्य सहस्रों विट्टी परिवारों की शत्रु है जिनकी सुनेहरी बालियां, खेत, गीत, घर रुई के फूल और बहुओं की हंसी इस बन्कू ने चुराई थी। यही घृणा नागेश्वर

और राघवराव की मैत्री का आधार बनी। इसी घृणा ने राघवराव को चिन्तन करने पर बाध्य किया कि संसार में प्रताप रेड्डी तो बहुत कम हैं, और राघव विट्टी अत्यधिक हैं और यदि ये विट्टी लोग आपस में एका कर लें तो इस बन्कू की दीवारें अधिक देर तक नहीं खड़ी रह सकतीं। यह विचार उसके मन में कोई एक दम स्पष्ट और निखरे रूप में नहीं आया था। बहुत धीरे २, अस्पष्ट रूप में धूमिल मार्गों से चल कर यह विचार उसके पास आया था। परन्तु जिस चीज़ ने इस घृणा को एक प्रबल प्रचण्ड भावना का स्वरूप दिया वह ज़मीदार के प्रति घृणा न थी जीवन के प्रति प्रेम था।

फिर हौले से राघवराव ने अपने जीवन की मुट्ठी खोली और घृणा के बहुत से जलते हुये क्षणों के बीच प्रेम के एक चमकते हुये फूल को देखा और उसका मुख एक दम प्रकाशमान हो उठा।

चन्दरी।

राघवराव को तीन वर्ष पूर्व का एक खेत याद आया। खेत पर रुई के फूलों का हिम-पात हुआ था। वह सुबह से रुई के फूल चुन रहा था। कहीं कहीं सफ़ेद रुई के फूलों में भूरी रुई के फूल आजाते तो उन्हें वह जुदा कर अलग झोले में रख देता। कहीं कहीं पर सफ़ेद रुई के फूलों में नरमा के फूल आजाते तो उन्हें वह अलग झोली में रख लेता। बहुत समय से वह इस खेत में काम कर

रहा था और बहुत शीघ्रता से अपना हाथ चला रहा था क्यों कि आज उसका पिता बीमार था और इस लिये एक कमेरे को दो कमेरों का काम करना था।

वह काम करते २ धीरे धीरे गुनगुना रहा था। उन लड़कियों को देख कर नहीं जो खेत के दूसरे सिरे से फूल चुनती हुई उसकी ओर आ रही थीं, बल्कि अपनी भुजाओं की थकान भुलाने के लिये और गीत के बोलों में अपने श्रम-संगीत का संयोजन करने के लिये वह गा रहा था। सहसा वह गाते २ रुक गया क्यों कि ठीक उसके सामने रुई के दो घने पौधों के पीछे से एक युवती ऊपर उठी और उसकी ओर देख कर निर्भयता से मुस्कराई।

राघवराव ने लेटे २ काल कोठरी ही में नेत्र मूंद लिये और चन्दरी को उसी प्रकार देखा जिस प्रकार उसने चन्दरी को प्रथम बार देखा था।

तो पहले तो उसे चन्दरी के सफ़ेद २ दाँत याद आए— छोटे २ दाँत, मोतियों की लड़ी की भांति होठों के बीच चमकते हुए। फिर चन्दरी की चोली, बिल्कुल लाल चोली जिस में छोटे छोटे शीशे टके हुए थे। और जब चन्दरी ने मुड़ कर पीछे की ओर देखा तो उसे मालूम हुआ कि चोली पीछे से खुली हुई है और लाल लाल धागों के गहरे निशान, त्वचा की श्वेतता में गुलाब की रगों

की भांति फैले हुए हैं। फिर जब चन्दरी शीघ्रता से उसकी ओर मुड़ी तो उसने देखा कि चन्दरी की लटों में जस्त के झूमर लटक रहे हैं जिनके अन्दर लाल मखमल टकी हुई है। और जब उसने मुस्कराकर और तनिक विचालित होकर अपने घाघर के ऊपर आँचल को ठीक किया तो उसे ज्ञात हुआ कि आँचल भी गहरे लाल रंग का है और उसमें भी गोल २ शीशे टके हुए है जो धूप में चमकते हैं और रुई के फूलों की सफ़ेदी में आंखों को चकाचौंध करते हैं। और जब चन्दरी ने रुई के पौधे से फूल तोड़ने के लिये हाथ बढ़ाया तो राघवराव को पता चला कि चन्दरी की कलाईयों में पहले तो काले सींग की चूड़ी है और इसके पीछे कलाई से कुहनी तक हाथी दाँत की चूड़ी है और अंगूठे के समीप हरे अक्षरों में कोई नाम खुदा हुआ है। इस प्रकार माथे पर बिंदियां गुदी हुई हैं। बिंदियों से जब वह नीचे आया तो बहुत देर तक वह उन नेत्रों में खोया रहा जिनका रंग हरियाली लिये हुए था .... बहुत गोरा रंग, ऊँचा पूरा क़द, पतले होंट............. चन्दरी। और यह सब कुछ एक क्षण में हुआ था। दूसरे क्षण वह भी मुस्करा दिया, परन्तु यह दूसरा क्षण, मुस्कराने वाला क्षण, इतना महत्व पूर्ण न था जितना पहला देखने का क्षण। पहलें क्षण को उसने कई बार अपने पास बुलाया था। जंगलों में घूमते हुये, पुलिस और फ़ौज से छुपते हुये, काग़ज़ के कारख़ाने में काम करते हुये, कई बार उसने

इस क्षण को अपने पास बुलाया था और इस से शक्ति प्राप्त की थी और कई बार इस क्षण को अत्यन्त कोमल मृदु और दुर्बल बनाने वाला पाकर अपने पास से दूर भगा दिया था। कई बार बिना बुलाये यह क्षण उसके पास आ जाता था और उसे बहुत पीड़ा पहुंचाता था। जैसे मरुस्थल में मनुष्य प्यासा हो और पानी न हो और पानी मृगतृष्णा बन कर सामने आ जायं, ठीक इसी प्रकार की पीड़ा, राघवराव ने अनेक बार अनुभव की थी। राघवराव इस पहले क्षण के सौन्दर्य और इस की प्राणभेदी कसक से भली भाँति परिचित था। इस समय भी इस क्षण को अपने पास बुलाते हुये उस ने एक मधुर शान्ति और गहरी चुभन का अनुभव किया।

चन्दरी लौम्बाड़ी क़बीले की एक लड़की थी। उसके पिता का नाम भाग्य था। वह एक मधुर कंठ वाला ख़ाना बदोश था, और अपने क़बीले के साथ कुछ दिनों के लिये भोगावती नदी के तट पर आया था। इन दिनों खेतों में रुई की फ़सल तैयार था इस लिये इन ख़ाना-बदोशों को भी काम पर लगा लिया गया। इसी लिये चन्दरी आज इस क्षण ज़मीदार के खेतों में रुई के फूल चुन रही थी वरना साधारणतया तो वह जंगल से शम्मालू की लकड़ी बीन कर बेचती थी या बबूल के वृक्षों से गोंद एकत्रित करके छोटे छोटे क़स्बों में आवाज़ लगाती फिरती थी- "डिन्क ले लो, डिन्क ले लो।"

इस पहले क्षण के पश्चात् और भी कई क्षण आये। क्यों कि राव नौजवान था और चन्दरी भी जवान थी इस लिये बीज बोया जायगा और फसल काटी जायगी। इन दूसरे क्षणों में सुगन्धित खेत थे, और रूठने के तौर थे और बदन चुरा कर भाग जाने के तेवर थे, एक चढ़ती हुई नदी थी, एक फैलती हुई लहर थी। और जब चन्दरी ने राघवराव को अपना मंगीतर मान लिया तो एक सुन्दर नृत्य भो बन गई, किन्तु अपने क़बीले में नहीं, किसी अन्य पुरुष के सन्मुख नहीं, केवल अपने मंगीतर के सामने, वन में, नागेश्वर की झोपड़ी के सामने। चन्दरी ने इस अवसर पर लाल मदरा का बना हुआ मोटा फूलदार घाघरा पहना था जिस पर डेढ़ फुट चौड़ी रुपहली गोट थी। आधी आधी पिंडलियाँ नग्न थीं और टखनों से ऊपर कांसी के ज़ेवरों में सापों के फन लहरा रहे थे। राघवराव ने इस नृत्य को देखा और उसके मस्तिष्क में एक बन्द पालकी का चित्र उभर आया जो रंगीन थी, नक़्शदार थी और जिसके दोनों ओर लाल रेशम के कढ़े हुये पर्दे लटक रहे थे और जो आज ख़ाली नहीं थी।

और फिर राघवराव को वह क्षण याद आया जब रुई की फ़सल इकट्ठी कर ली गई थी और वह अपने घर से निकल कर तीसरे पहर भोगावती के तट की ओर जा रहा था जहाँ चन्दरी का तान्डा अपनें डेरे डाले पड़ा था। मार्ग में उसे रामलू ग्वाला मिला था जो उसकी ओर देख

कर मुस्कराया। उसने मुस्कराने के अतिरिक्त और कोई बात नहीं की। राघवराव ने अधिक ध्यान नहीं दिया यद्यपि उसे रमलू की मुस्कान चुभती हुई लगी। फिर उसे मार्ग में चाचा रेंगडू मिल गया। वह भी उसकी ओर देख कर हंसा परन्तु राघवराव अपने उल्लास में मग्न बहुत आगे चला गया। उसने सोचा बुड्ढा मेरे प्रेम पर हंसता है क्योंकि मैं ने अपनी जाति से बाहर प्रेम किया है। हंसता है तो हंसता रहे। राघवराव सिर झुका कर सीलू की झाड़ियों के समीप से निकल कर उस रास्ते पर हो लिया जिसके दोनों ओर नागफनी की झाड़ियाँ थीं और जो तान्डे की ओर जाता था। कोई आध मील चल कर वह ऐसे स्थान पर पहुंच गया जहाँ तान्डे के गधे घूम रहे थे। पास ही क़ाफ़ले के डेरे थे। कुछ डेरे पटसन के थे, कुछ सेंधी के पत्तों के बने हुये थे। पुरुष चटाइयों पर बैठे रस्से बट रहे थे और स्त्रियाँ शरमालू की लचकीली टहनियों से टोकरियां बुन रही थीं। एक बुड्ढी मामा अकेली अकेली एक जवान सा गीत गा रही थी और युवतियाँ उसकी ओर देख कर हंस रही थीं। राघवराव इन सब नज़ारों से गुज़रता हुआ भाग्य के डेरे पर पहुंच गया। भाग्य, एक चूल्हे पर घी में पान और लौंग डाल कर उसे गर्म कर रहा था। राघवराव ने पूछा– "इस से क्या होगा?"

भाग्य ने आखें मार कर कहा– "इस से मिलावट का

घी बिल्कुल असली लगता है।"

"तो असली घी क्यों नहीं बेचते हो।"

"अरे असली घी बेचें तो खरीदेगा कौन? इतना तो महंगा होता है। इसी लिये हम नक़ली घी को असली करके बेचते हैं।

"चन्दरी कहाँ है?"

"आती होगी, बैठो।"

"है कहाँ?"

"बन्कू गई है। ज़मीदार के लड़के ने बुलाया है।"

राघवराव का दिल 'धक' से रह गया। कुछ क्षणों के पश्चात् बोला– "ज़मीदार के लड़के ने क्यों बुलाया है?"

"मुझे क्या मालूम" भाग्य घी में लकड़ी का चमचा चलाते हुये बोला– सवेरे की गई है। अब आती होगी, बैठो।"

राघवराव धरती पर बैठ गया।

तीसरा पहर बीत गया। सन्ध्या भी बीत गई। सूर्य अस्त होने के पश्चात् आकाश की लालिमा भी विलीन होने लगी। तब कहीं जाकर चन्दरी ज़मींदार की बन्कू से पलटी। राघवराव के क्रोध से लाल मुख को देख कर एक क्षण के लिये ठिठकी, फिर साहस करके आगे बढ़ आई और मुस्करा कर बोली– "तुम कब आये?"

राघवराव ने कोई उत्तर नहीं दिया।

चन्दरी उसके निकट खड़ी होकर अपने पल्लू से खेलने लगी।

"नागफनी का शरबत पियोगे?" चन्दरी ने अत्यन्त कोमल स्वर में कहा।

"नहीं, नहीं।" राघवराव क्रोध से चिल्लाया। "मुझे कुछ नहीं चाहिये।"

"क्या बात है? क्यों चिल्ला रहे हो?" चन्दरी ने विस्मित होकर पूछा।

"तुम कहाँ गई थी?"

"प्रताप रेड्डी ने बुलाया था।" चन्दरी बोली।

"तुम वहाँ क्यों गई थी?"

"कैसे न जाती, मालिक ने बुलाया था" चन्दरी अचम्भित हो कर बोली।

"वहाँ पर क्या – क्या हुआ।"

अब तक चन्दरी खड़ी थी, इस के पश्चात् वह बैठ गई और क्लांत स्वर में बोली "कोई नई बात नहीं हुई। वही हुआ जो सदा होता है।

"वेश्या" राघवराव क्रोध से चिल्लाया।

"मैं वेश्या नहीं हूं" चन्दरी ने क्रोध से चमक कर कहा– "मैं ने उस से साफ कह दिया कि वह मेरे साथ सब कुछ कर सकता है परन्तु मेरी छातियों को हाथ नहीं लगा सकता।"

"छातियों को हाथ लगाने का क्या मतलब है?"

"क्योंकि उन से बच्चा दूध पियेगा"– चन्दरी ने उत्तर दिया।

'बच्चा दूध पियेगा' कहते समय चन्दरी ने बड़े प्यार से राघवराव की ओर देखा। राघवराव के नेत्र झुक गये। वह धीमे स्वर में बोला– "चन्दरी क्या यह छातियाँ ही पवित्र होती है? क्या वह नाभि पवित्र नहीं होती जो बच्चे को रक्त देती है? क्या वह होंट पवित्र नहीं होते जो बच्चे को लोरी देते हैं? क्या वह भुजाएं पवित्र नहीं होती जो बच्चे को अपनी गोद में सुलाती हैं? चन्दरी तू तो सर्वांग पवित्र हो सकती, फिर किस लिये तेरी पवित्रता के टूक २ खंड खंड कर दिये?"

चन्दरी ने कोई उत्तर नहीं दिया क्योंकि उस क़बीले की किसी स्त्री के पास इसका उत्तर न था, इस अत्याचार का उपाय न था। बस वह चुपके से रोने लगी। धीरे २ उसके अश्रुकण उसके नेत्रों से छलक २ शुष्क भूमि में समाते गये। राघवराव मौन, निस्तब्ध इन टपटपाते हुये अश्रुओं का प्रवाह देखता रहा। कुछ समय पश्चात् चन्दरी के आंसू भी समाप्त हो गये और थोड़े समय के पश्चात् शुष्क भूमि पर भी उनका कोई चिन्ह न रहा। सहसा राघवराव उठ खड़ा हुआ क्योंकि हठाते उसके मस्तिष्क में इस सत्य का उदय हुआ कि ये आसूं आँघरा की भूमि को न सींच सकेंगे। इसके लिये किसान को अपना रक्त देना होगा।

इस एक क्षण में वह अपने प्रेम के समस्त क्षणों को फाँद गया। इस एक क्षण में वह अपने मस्तिष्क की बहुत सी दीवारों को फाँद गया। इस एक क्षण में जब वह भूमि से उठा, तो एक बिल्कुल नये क्षण का हाथ थामें हुये था।

उस रात वह अपने घर नहीं लौटा। उस रात वह अपने गाँव से बाहर चला गया। उस रात वह उस स्थान पर चला गया जहाँ उसे एक बार विट्टी बन कर जाना पड़ा था। परन्तु आज वह विट्टी नहीं था। आज वह बन्धन–मुक्त, स्वतंत्र था। आज उसके हाथों में एक नया दर्पण था। आज वह अपने हाथों में एक रंगीन, नक़्काशी-दार पालकी उठाये एक नई दुलहन की खोज में जा रहा था।

यहाँ तक जो कुछ हुआ, उसे राघवराव कभी यहाँ से कभी वहाँ से उठा कर देख सकता था, जैसे घटनाओं के शृंखला की बीच की कड़ी खोई हुई हों जो जीवन के आदि से अन्त तक चलती है। परन्तु इस के पश्चात् जो कुछ हुआ वह उसे सिक्कों की भांति उठा कर नहीं देख सकता था। ऐसा होता कि जब वह एक क्षण को उठा कर देखता तो दूसरा क्षण स्वयं पहले क्षण के साथ ऊपर उठ आता घटनाएं शृंखला-बद्ध थीं और यह शृंखला घटनाओं को बांधे हुए साथ २ चल रही थी। उसे कहीं कहीं जोर के झटके लगे थे मार्ग में भटका

देने वाले मरुस्थल भी पड़े थे परन्तु इन समस्त जटिल समस्याओं, विपदाओं और विपत्तियों के अन्दर उसे एक दिशा उभरती हुई दिखाई दी थी। यदि ऐसा न होता तो वह इन विपदाओं में से न गुज़र सकता जो उसे पिछले तीन वर्षों में सहनी पड़ी थीं।

आरम्भ में तो उसे यह ज्ञात न हो सका कि वह किधर जाना चाहता है और क्या करना चाहता है। जीवन का एक अस्पष्ट सा कल्पना चित्र उसके पास था— अत्याचार का एक अन्धा अनुभव था, प्रेम की एक अतृप्त तृष्णा थी, जो सूर्यापेट में तीन चार मास बरतन मांजने से भी न मिट सकी। बनियें की पत्नी जिसका वह नौकर था, उसे, दिन भर काम करने के पश्चात् इतनी रोटी देती थी जिस से वह जीवित रह सके। यही गाँव में प्रताप–रेड्डी भी किया करता था। कभी कभी बनियें के यहाँ असमय कोई अतिथि आजाता तो रात को राघवराव को बहुधा भूखा सोना पड़ता था। गाँव में भी उसे कई बार भूखा सोना पड़ा था। बातों बातों में राघवराव को पता लग गया कि बनियें की भूमि गाँव में है और वह और बहुत सी भूमि ख़रीदने को फिर रहा है। बर्तन मांजते २ राघवराव ने एक छोटे जगन्नाथ रेड्डी को जन्म लेते देखा। यह सच है कि इस बनिये का मकान बहुत बड़ा नहीं था। इस मकान के बाहर कोई भव्यशाली बन्कू भी नहीं थी। परन्तु वह अपनी भूख की तुलना, एक बर्तन मांजने वाले

की भूख की तुलना, गाँव के विट्टी की भूख से तो कर सकता था। अपने श्रम और वेतन का विट्टी के श्रम और आय से तो मिलान कर सकता था। और धीरे धीरे वह इस तथ्य पर पहुंचा कि विट्टी गाँव ही में नहीं होते। विट्टी शहर में भी होते हैं। रेड्डी गाँव ही में नहीं होते। रेड्डी शहर में भी होते हैं। रेड्डी को भगवान अपने हाथों से बना कर नहीं भेजता। रेड्डी धीरे धीरे शनैः शनैः रात्रि के अन्धकार में बनते हैं। इस वास्तविकता का अनुभव राघवराव को उन क्षणों में हुआ जब बनिये ने उसे दो तीन बार ब्लैक मार्केट का सामान इधर से उधर पहुचाने का काम सौंपा। प्रत्येक बार बनिये की थैली भरी थी, प्रत्येक बार राघवराव का पेट खाली था। यह असम्भव था कि वह अपनी भूख से, बनिये की थैली की तुलना न करता। वह एक आर्थिक व्यवस्था और उसके पाशविक रूप को देख रहा था। कैसा ख़तरनाक तमाशा उसके सामने खेला जा रहा था। जगन्नाथ रेड्डी के घर के अन्दर जाने का उसे कभी अवसर न मिला था परन्तु आज वह शत्रु के घर में उपस्थित था जहाँ दिन रात बनिये और उसकी पत्नी की वार्ता सुन सकता था। इस वार्ता में रूपये और भूमि का बहुधा उल्लेख होता था। उसकी भूख का कभी उल्लेख न होता था।

दो एक बार चोर बज़ारी करते समय राघवराव के मन में विचार आया कि इस ख़तरनाक तमाशे को रोक

दे। परन्तु कैसे? उसे अपने गाँव के कटु अनुभव भली भांति याद थे। उसे अपने गाँव के माल पटेल और पुलिस पटेल की मिली भगत भी याद थी। क्योंकि यह अनुभव उसने किसी समाचार पत्र से प्राप्त नहीं किया था बल्कि अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में पढ़ा था और चक्खा था, इस लिये सूर्यापेट में चार मास रह कर भी उसने एक बार यह न सोचा कि वह इस सम्बन्ध में पुलिस के पास जा सकता है। कोई लाख समझाता परन्तु उसके मस्तिष्क में यह बात किसी प्रकार न बैठ सकती थी कि पुलिस भी इस सम्बन्ध में कुछ कर सकती है। यदि कोई ऐसा करने का परामर्श देता तो वह कदाचित् मौन हो जाता था एक एक कटु-मुस्कान से उसका उत्तर देता।

जिस गली में वह रहता था उस गली में और भी कई घरों में बर्तन मांजने वाले रहते थे—शहर के विट्टी। उसकी भाँति बहुत से विट्टी गांव से आये थे, स्थान स्थान से, भारत के विभिन्न कोनों से। उन में एक के प्रति एक प्रकार की सहानुभूति भी थी। ये लोग अपने स्वामियों की अनुपस्थिति में बड़ी बेबाकी से उन्हें गालियाँ देते थे जो गाँव के विट्टी साधारणतया नहीं करते थे। परन्तु केवल इसी बात से राघवराव को शान्ति न मिल सकती थी। गाली से मन की भड़ास तो निकल जाती है परन्तु पेट की भूख दूर नहीं होती।

एक दिन जब राघवराव ने अपने पड़ोस के नौकर

वेंकट से इस बात का उल्लेख किया तो वह बड़े ज़ोर से हंसा। बोला– "राव तू निरा बुद्धू है। इन बातों से कुछ नहीं मिलेगा। भूख दूर करने का उपाय यह है कि मालिक तुझे खाता है, तू मालिक को खा। सब्ज़ी भाजी में, दाल आटे में, पान सुपारी में और यदि कुछ न बने तो किसी दिन अवसर देख कर बनैनी का जेवर ले कर भाग जा या अगर सम्भव हो सके तो बनैनी ही को लेकर भाग जा। तू तो जवान है, सुन्दर है, गाँव से नया नया आया है। तेरे शरीर में अभी तो रक्त है।" यह कह कर वेंकट ज़ोर से हंसा और उसने ज़ोर से राघवराव की रान पर हाथ मारा।

वेंकट उस गली में नौकरों का सरदार था। वह घाट घाट का पानी पिये हुये था और स्थान स्थान से चोरियाँ करके भागा हुआ था। जीवन में उसने बीसियों नाम बदले थे और बीसियों नाम बदलने को तैयार था। पास पड़ोस बल्कि अन्य मुहल्लों में भी नौकर लोग जो, छोटी मोटी चोरियाँ करते थे उनमें से भी वेंकट अपना भाग धरवा लेता था। फिर बहुत से नौकर मिल कर शराब पीते थे या चरस का दम लगाते थे, अपने मालिकों को चटखारेदार गालियाँ देते थे और उसके थोड़े समय पश्चात् पुनः भीगी बिल्ली बन कर मालिकों के घरों में बर्तन साफ़ करने लगते थे।

वेंकट ने कई बार राघवराव को अपनी टोली में

घसीटना चाहा परन्तु राघवराव जाने क्यो अलग अलग रहता था। जाने उसे इन विट्टियों की कौनसी बात अरुचिकर थी। राघवराव ने अनुभव किया कि ये छोटे छोटे मकानों के डरबे, एक बहुत बड़ी भट्टी हं जहाँ धीरे धीरे लोगों को जुर्म की अग्नि की ओर धकेला जा रहा है। वेंकट और अन्य नौकरों के व्यवहार उस भीमैया और दुर्गैया की याद दिलाते थे जो उसके पिता के कथनानुसार कभी उन्हीं की भांति खेत वाले थे, फिर कमेरे हो गये, फिर विट्टी बने और विट्टी से ज़मीदार और देशमुख के गुन्डे। वह अपने सामने चरस के दम में, ठर्रा शराब की बोतल मे, पान को कोकीन में और गुदा मैथन मे भीमैया और दुर्गैया जैसे अत्याचारी गुन्डों को पैदा होते हुये देख रहा था। ये लोग जो उस जैसे थे, उसके सामने बदल रहे थे और बदल कर बिगड़ रहे थे, पतन की ओर झुक रहे थे। वह कुछ गुण जो गाँव में उनके पास थे, वह भी यहाँ आकर गवां रहे थे और राघवराव के पास एक अस्पष्ट अशान्ति, क्लेश और प्रचण्ड घृणा के अतिरिक्त और कुछ न था जिस से वह घटनाओं के इस भीषण धारा की दिशा बदल सकता।

राघवराव ने किसान की सी सूझ बूझ के साथ केवल अपने को बचाना चाहा। उसने बड़ी ईमानदारी से बनिये का काम किया— बड़े परिश्रम से, बड़ी लगन से, जी तोड़ कर इस प्रकार उसने गाँव में भी काम नहीं

किया था। परन्तु इसका भी कोई परिणाम न निकला। किसी दिन दान या पुरस्कार स्वरूप उसे अधिक रोटी, बनैनी की एक भोंडी सी मुस्कान और यह शाबाशी "बड़ा अच्छा लड़का है" मिल जाती। दो चार दिन ठीक कटते फिर वही भूख, वही झूठे टुकड़े।

एक दिन रसोई से एक छोटी थाली गुम हो गई। राघवराव पर चोरी का आरोप लगा। बनैनी ने उसे पीटा, फिर बनियें ने उसे पुलिस के हवाले करने की धमकी दी। बनिया उसे थाने में ले जा रहा था कि थाली मिल गई– किसी दूसरे कमरे में चारपाई के नीचे रखी थी। बनियां और बनैनी दोनो चुप हो गये परन्तु किसी नें भी उस से क्षमा नहीं माँगी। यह कैसे सम्भव है कि मालिक विट्टी से क्षमा-याचना करे?– राघवराव को याद आया कि किस तरह उसे दिन में दस बार छोटी २ भूलों पर क्षमा माँगनी पड़ती है। परन्तु वह तो नौकर है, विट्टी है।

जिस दिन राघवराव पर चोरी का आरोप लगा, उस दिन उसका मन बहुत खिन्न और उदास था। वेंकट ने उसे बहलाने के लिये बहुत से गन्दे चुटकले सुनायें, परन्तु राघवराव का जी न बहला। वेंकट ने उसे चरस का दम लगा कर जीवन की विभीषिकाओं को भूल जानें की प्रेरणा दी परन्तु राघवराव इस पर भी न माना। हाँ रात को जब राघवराव घर के काम काज से निबट गया

तो बेंकट उसे बलात् घसीट कर वहाँ ले गया जहाँ स्त्रियाँ अपने शरीर बेंचती हैं।

राघवराव उस समय तक कभी उधर नहीं गया था। इस लियें पहलें पहल उसे ज्ञात न हुआ कि बेंकट उसे किधर लें जा रहा है। वेन्कट नें ऊसे केंवल इतना बताया था कि वह उसे आज एक ऐसीं मजेंदार जगह में लें जा रहा है जहाँ पहुंच कर वह जींवन के समस्त क्लेशों कों भूल जायेगा। रघवराव के अनुरोध पर भी उसने यह न बताया कि वह उसे कहाँ लें जा रहा है।

फिर सहसा राघवराव नें अपनें सामनें एक स्त्री को देखा। यथार्थ में एक विशेष स्थान पर पहुंच कर बेंकट ने राघवराव को आगे धकेल दिया था और स्वयं पीछे हो गया था। यहाँ पर राघवराव ने देखा कि धुआ ही धुंआ है, कमरे में एक पलंग है। बहुत छोटा सा कमरा है, बहुत घना अधेंरा है और उस अंधेरे में एक स्त्री मुस्कराने की चेष्टा कर रही है। राघवराव ने पलट कर बेंकट से पूछा– "यह क्या है?" बेंकट नें उसकी हथेली पर आठ आने रखे और कहा– "जाओ बेटा ऐश करो।"

इतना कह कर बेंकट वहाँ से चला गया। कमरे में वह स्त्री और राघवराव अकेले रह गये। स्त्री ने कहा "बैठ जाओ" और पलंग की ओर संकेत किया। परन्तु राघवराव देर तक खड़ा रहा। देर तक चुप रहा। देर तक स्त्री की ओर घूरता रहा।

स्त्री ने तनिक कटुता मे कहा– "खड़े खड़े क्या देखते हो? बैठ जाओ।"

सहसा राघवराव ने खड़े २ वहीं से पूछा– "क्या मैं तुम्हारी छातियों को हाथ लगा सकता हूं?"

उस स्त्री को यह प्रश्न बड़ा अनोखा सा लगा, परन्तु वह बोली– "हाँ तुम ने पैसे दियें तो तुम मेरी छातियों को क्या मेरे शरीर के हर भाग को हाथ लगा सकते हो।"

कुछ क्षणों के लिये राघवराव पर मानो बिजली गिर गई। फिर राघवराव के पग स्वयं कमरे के बाहर चले गयें। वह स्त्री उसे बुलाती रही परन्तु राघवराव के पग कमरे से बाहर गली में चलें गये। वेंकट उसे पुकारता रहा परन्तु राघवराव गली के फ़र्श पर भागता गया– पहलें हौले २, फिर तेज़ तेज़। भागते २ उसके मन में विचार उत्पन्न हुआ कि वह सूर्यापेट से भी भाग जायगा क्योंकि उसके गाँव कीं नारी नें कम सें कम अपनी छातियों की पवित्रता को तो सुरक्षित रखा था परन्तु यहाँ सूर्यापेट में नारी नें अपना समस्त शरीर बेंच दिया है। उसे अनुभव होनें लगा जैसें अब वह सूर्यापेट में भी नहीं जा सकता।

राघवराव काल कोठरी के अन्धकार में अपनी आदर्शवादी भावुकता पर मुस्कराया, जिसने उसे सूर्यपेट से भी भाग जाने पर बाध्य किया था। श्रीपुरम से वह सूर्यपेट भागा, सूर्यपेट से भाग कर हैदराबाद चला आया। यहाँ आ कर वह रिक्शा चलाने लगा क्योंकि उसकी भुजाओं में बल था, उसकी छाती पक्की थी, उसकी टांगें फुर्तीली थीं और वह बिना थके चढ़ाई चढ़ जाता था और बिना कठिनाई के उतराई से उतर आता था। पहले पहल उसे कंकरीट की सड़क अच्छी लगी, बिजली की बत्तियां भली लगीं और रिक्शा की घन्टी संगीतमय लगी। रात को उसे पेट भर भोजन मिला तो उसने सोचा कि उसे अपनी मंजिल मिल गई। रिक्शा के मालिक ने उसे दो वर्दियाँ भी सिलवा दीं तो वह सब कुछ भूल गया और मजे से पाँच छै मास तक ताजी नस्ल के कुत्ते की भांति हैदराबाद की सड़कों पर दौड़ता रहा। वह यह भूल गया कि वह एक मनुष्य है जिसे घोड़े की भांति जोता गया है। वह यह भूल गया कि कुछ लोग सदैव रिक्शा में सवार होते हैं और कुछ लोग सदैव रिक्शा चलाते हैं। वह यह भूल गया कि वह किस उद्देश्य से यहाँ आया था। दो कपड़े, दो वक्त रोटी और कुछ रुपयों ने उसकी आखों के आगे एक रंगीन झिल्ली तान दी और जिस दिन उसने अपने पिता वीरैया को २० रु० भेजे उस दिन उस जैसा भाग्यशाली पुरुष सारे हैदराबाद में कोई

नहीं था। फिर बीड़ी का मज़ा उत्तम था, सिग्रेट का मज़ा अति उत्तम था और माँस का मज़ा तो सर्वोत्तम था।

पाँच छै महीने इसी सम्पन्नता और तुष्टि में व्यतीत हो गये। फिर वह बीमार पड़ गया। उसका विचार था कि वह एका एक बीमार पड़ गया, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं था। पहले पहले चढ़ाई चढ़ते हुये उसे एक दिन चक्कर आया था। वह बड़ी कठिनता से संभला था। फिर एक दिन खांसी-- हल्की सी खाँसी का दौरा पड़ा था। फिर एक दिन उसे ज्वर हुआ था-- हल्का सा ज्वर। फिर एकाएक वह एक मास तक बीमार रहा। इस बीमारी में उसके मालिक ने उसकी थोड़ीसी सहायता की थी क्योंकि वह मालिक का सब से अच्छा रिक्शा चलाने वाला था और फिर राघवराव ने भी कुछ पैसे बचा कर रखे थे। वेह इस बीमारी में उसके काम आये। एक महीने पश्चात् वह अच्छा हो गया परन्तु शरीर में दुर्बलता बनी रही। वह फिर हौले २ रिक्शा चलाने लगा-- परन्तु हौले हौलें और हांफते हुए और थोड़ा थोड़ा खांसते हुए। डाक्टर ने उसे दो मास और विश्राम करने को कहा था परन्तु विट्टी काम नहीं करेगा तो खायेगा कहां से। इस लिये रिक्शा चलाना आवश्यक था। यद्यपि अब दम फूलता था और माथे पर और सारे शरीर पर पसीना आ जाता था और भुजाओं और टाँगों की नसें रक्त सचांर से मानों फटने लगती थीं और फेफड़ों में कभी कभी खांसी काले

धूंऐ की भांति चक्कर काटती थी परन्तु रिक्शा चलाना अनिवार्य था–

अन्धकार पुनः लौट आया था

राघवराव रुक गया। उसने एक उड़ती हुई दृष्टि उस तमाम भीड़ पर डाली जो उसकी रिक्शा में सवार हुई थी। – क्लार्क जो एक आने के लिये उससे झगड़ते थे, विद्यार्थी जो रिक्शा तेज़ चलाने के लिये उससे बिगड़ते थे, गुन्डे जो रात्रि के अन्धकार में छुरा लिये घूमते थे, व्यभिचारी जो सिनेमा का पर्दा हटा कर रिक्शा का पर्दा खींच लेते थे और शरीर बेचने वाली औरतों से लिपट कर उन्हें प्यार करते थे और जब वह रिक्शा चलाते २ खांसता था तो ऊसे गंदी गालियाँ देते थे या ऊसकी रिक्शा से उतर कर उसे पैसे दिये बिना दूसरी रिक्शा में सवार हो जाते थे। मौलवी जो रिक्शा को बन्द गाड़ी की भांति प्रयोग करते थे; खद्दरधारी जो रिक्शा से पीकदान का काम लेते थे; बनिये जो रिक्शा को मालगाड़ी समझते थे, स्त्रियाँ जो रिक्शा को बच्चों का अनाथ–आश्रम समझती थीं– कैसी २ हास्य जनक सूरतों से राघवराव को पाला पड़ा था। गाँव में राघवराव ने ग़म खाना सीखाथा। यहां शहर में आकर राघव नें मुस्कराना सीख लिया– दूसरों पर मुस्कराना और अपने पर हंसना। फिर रॆघवरॆाव ने उस तमाम भीड़ पर दृष्टि डाली और उसमें से एक व्यक्ति को चुना– यह व्यक्ति

एक दिन आबिदअली रोड से रात्रि के ९ बजे उसकी रिक्शा में सवार हुआ। उसके हाथ में दो किताबें थीं। उसके कंठ में एक आंतरिक प्रफुल्लता की झलक थी। जिस प्रकार उसनें रिक्शा वाले को अपनें पास बुलाया, उसमें न अहम्भाव था और न सामीप्य भाव– बहुत अच्छा ढंग था। भाड़े के दाम भी स्वयं उसनें बता दिये जो न कम थे न अधिक थे, बिल्कुल उचित थे। इस लिये इस बात पर भी झगड़ा नहीं हुआ। मार्ग में चलते हुए भी उसनें कोई बात न की वरना रिक्शा वालें से लोग बहुधा बड़े बेढ़ब प्रश्न पूछते हैं और प्रश्न पूछते समय यह नहीं सोचते कि रिक्शा चलाने वाले के पास सांस इतना कम होता है कि वह एक समय में रिक्शा चलाना और बातें करना, दोनों कार्य नहीं कर सकता। वह या तो बातें कर सकता है या रिक्शा चला सकता है। इस दृष्टि कोण से भी यह व्यक्ति बहुत अच्छा था।

आधा सफ़र इसी निस्तब्धता में कट गया।

इसके पश्चात् जिआई रोड का नाका आ गया। इस व्यक्ति ने धीरे सें कहा– "यहाँ से अख़्तर रोड की ओर चलना है।" लम्बीं चढ़ाई थी। राघवराव का दम फूल गया। उसकी नासिकाएं उभर आईं और फिर वही खांसीं का धसका उठा। उस व्यक्ति नें अत्यंत कोमलता से कहा– "रिक्शा रोक लो।"

राघवराव ने कहा– "नहीं साहब, चिन्ता न कीजियें,

अभी ठीक हो जाऊंगा। मैं आपको लें चलता हूं।"

उस आदमी ने कुछ नर्मी से परन्तु कुछ दृढ़ता से कहा– "रिक्शा रोक लो"

राघवराव ने रिक्शा रोक ली। उसने सोचा यह व्यक्ति अब मुझे घूर कर या एक आध मोटी सी गाली देकर चलता बनेगा और मेरा किराया भी मारा जायगा। परन्तु उस व्यक्ति ने ऐसा नहीं किया। वह राघवराव के साथ २ चलने लगा और कहने लगा– यह चढ़ाई तुम खाली रिक्शा ले कर चल सकोगे न?– आगे जाकर मैं फिर सवार हो जाऊंगा।"

राघवराव ने कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से उस व्यक्ति की ओर देखा– इस व्यक्ति के श्यामल मुख पर दो बड़े २ नेत्रों में एक नये प्रकार की सहानुभूति झांक रही थी– सहानुभूति, भाव बोध और गौरव– एक अद्भुत सामीप्य और दूरत्व।

उस व्यक्ति ने पूछा– "कब से खाँसी आती है?"

"एक महीनें से।"

"कहाँ रहते हो?"

"गोविन्दराम के बाड़े में।"

"यूनियन के मेम्बर हो?"

"क्या?" राघवराव की समझ में यह प्रश्न नहीं आया। वह व्यक्ति कुछ क्षण चुप चाप राघवराव के साथ

चलता रहा। फिर धीरे से उसके कन्धे पर हाथ रख कर बोला।" जैसे तुम रिक्शा चलाने वाले हो, ऐसे ही शहर में अन्य रिक्शा चलाने वाले भी हैं। सब की कठिनाइयाँ एक प्रकार की है। इस लिये सब के लिये उपाय भी एक प्रकार का हो सकता है। इस लिये रिक्शा चलाने वालों ने अपनी एक यूनियन बना ली है जब सब रिक्शा चलाने वाले मिल कर बैठते है।"

राघवराव ने अपने साथ चलने वाले व्यक्ति को बड़े सन्देह से देखा। उसके मस्तिष्क में सूर्यापेट के नौकरों की टोली घूम गई। उसने बिगड़ कर उस व्यक्ति का हाथ अपने कन्धे से हटा दिया और बोला– "न साहब, न मैं किसी टोली का मेम्बर हूं, न मेम्बर बनना चाहता हूं।"

वह व्यक्ति कुछ देर तक चुपचाप राघवराव के साथ चलता रहा फिर उसने और ही प्रकार की बातें करनी आरम्भ कर दीं– राघवराव का नाम, वह कहाँ से आया था, रिक्शा चलाने में दम कैसे कम फूलता है, ढलान पर रिक्शा कैसे उतारनी चाहिये। सस्ता खाना कहाँ से मिलता है। सस्ता मकान कहाँ मिलता है। जो मालिक खाना, कपड़ा और मकान देते हैं वेह कितना धन रिक्शा वाले से काम करवा कर वसूल कर लेते हैं। बड़े काम की बातें थीं वेह– राघवराव बड़े ध्यान से उन्हें सुनता रहा। चलते २ उसे यह भी पता न चला कि वह

चढ़ाई कब की चढ़ आया है। कितने ही नाके, गलियाँ और बाज़ार पीछे छोड़ आया है। बातें करते करते राघवराव उस व्यक्ति के घर तक पहुंच गया और इस बीच में वह व्यक्ति एक मिनट के लिये भी उसकी रिक्शा में सवार नहीं हुआ।

अपने घर पहुंच कर उस व्यक्ति ने राघवराव को पैसे दिये, फिर उससे कहा– "एक प्याला चाय पीकर जाओ।" राघवराव ने इन्कार किया।

"नहीं नहीं आओ, इस समय बहुत सर्दी है। एक प्याला चाय पियोगे तो शरीर में गर्मी और शक्ति आ जायगी।" इतना कह कर उसने राघवराव का हाथ पकड़ लिया और उसे अपने घर के अन्दर ले गया।

राघवराव ने देखा कि घर -- घर छोटा सा है परन्तु बहुत साफ सुथरा है। दो कमरे हैं -- एक कमरा वह जिसमें वह खड़ा था और एक उसके अन्दर। दोनों के बीच में एक फूलदार कपड़े का पर्दा पड़ा है। बाहर के कमरे में तीन कुर्सियाँ पड़ी थीं जिन पर गद्दे पड़े थे। एक लम्बा सा बेंच था जिस पर एक नीला गद्दा पड़ा था। फ़र्श पर एक हरे रंग की दरी थी और चारों ओर लकड़ी के रैकों में किताबें रखी थीं। अभी वह यहाँ तक ही देख पाया था कि अन्दर के कमरे से फूलदार पर्दे को हटा कर एक पतली सांवली सी लड़की निकल आई।

उसके साथ एक छोटी सी लड़की भी भागती हुई आई और उस व्यक्ति की टांगों से लिपट गई जो राघवराव को यहाँ लाया था।

उस व्यक्ति ने मुस्करा कर राघवराव से कहा-- "मेरा नाम मक़बूल है, यह मेरी पत्नी है, यह मेरी बच्ची है आमना"-- फिर उसने आमना को गोद में लेकर कहा-- "यह हमारा साथी राघवराव है। इन्हें सलाम करो बेटा, इनकी गोद में जाओ।"

आमना ने अपनी नन्हीं नन्हीं भुजाएं राघवराव की ओर बढ़ा दीं। राघवराव ने भौंचका हो कर आमना को गोद में ले लिया। आमना उसकी गोद में आकर बोली-- "साथी लाल सलाम।"

राघवराव ने आश्चर्य से चारों ओर देखा-- आमना की ओर, मक़बूल की ओर, मक़बूल की पत्नी की ओर! परन्तु इन सबकी दृष्टि में एक अनोखा स्नेह था। एक ऐसी गहरी सहानुभूति और ऐसा मैत्री भाव था, चेहरों पर ऐसी सरल मुस्कान थी जो उसे आज तक कहीं नहीं मिली थी। उन चेहरों को एक क्षण तक आश्चर्य से देख कर वह यह तो न जान सका कि लाल सलाम किसे कहते हैं परन्तु इन हर्षोन्मत्त मुखड़ों से उसने इतना अनुमान अवश्य लगा लिया कि यह लाल सलाम कोई अच्छी वस्तु ही होगी। इस लिये उसने आमना से झिझकते झिझकते

कहा– "लाल सलाम" आमना खिलखिला कर हंस पड़ी। मक़बूल की पत्नी भी हंसी। मक़बूल भी मुस्कराया और फिर एक गद्दीदार कुर्सी पर बैठ कर बोला– "यह साथी इस समय खाना यहीं खायगे।"

राघवराव ने फिर विस्मय से मक़बूल की ओर देखा, परन्तु इसके पश्चात् कुछ कह न सका।

दरी पर चीनी के साफ़ सुथरे बर्तनों में सब नें मिल कर खाना खाया। आमना राघवराव की गोद में बैठी थी और उससे ग्रास इस प्रकार मांग रही थी जैसे वह बचपन में अपने पिता से ग्रास मांगा करती थी। उसे इन नन्हें २ हाथों का अनुरोध बहुत प्यारा लगा। मक़बूल की पत्नी सुरैया को उसकी प्लेट में बार बार माँस का कोई अच्छा सा टुकड़ा डाल देना बहुत भला लगा। मक़बूल चुपचाप खाना खाता रहा। राघवराव उससे बहुत सी बातें पूछना चाहता था– साथी किसे कहते हैं? लाल सलाम का क्या अर्थ है? और सब से बढ़ कर इस स्नेह और सहृदयता का क्या आशय है?– यह सब कुछ वह जानना चाहता था।

खाना खानें के पश्चात् सुरैया नें दस्तख़ान हटा लिया और राघवराव के लियें गर्म २ क़हवे की एक प्याली लें आई।

क़हवा पी कर राघवराव ने मक़बूल की ओर देखा।

वह कुछ कहना चाहता कि मक़बूल ने कहा– जब तक तुम्हें खांसी की शिकायत है तुम्हें रात को काम नहीं करना चाहिये।"

राघवराव चुप रहा।

मक़बूल बोला– हमारी यूनियन का एक डाक्टर है। तुम उससे मुफ़त इलाज करा सकते हो?

राघवराव चुप रहा।

"इतनी ठण्ड में तुम बाड़े जा कर क्या करोगे। यहीं सो रहो।" सहसा राघवराव ने पूछा– "साथी का क्या मतलब है?"

मक़बूल धीरे से अपनी कुर्सी से उठा। उसनें सुरैया से कहा– "सुरैया आज साथी यहीं सोयेगा।"

सुरैया ने अन्दर से एक बिस्तर निकाला और उसे दरी पर बिछा दिया। मकबूल ने किताबों के रेक से एक किताब चुन कर निकाली और फिर राघवराव के पास आ बैठा। राघवराव ने उतावला हो कर किताब के चिकनें पन्नों को हाथ लगाया। मक़बूल ने किताब उसके आगे रखदी। राघवराव ने किताब के पन्नों पर हाथ फेरा अक्षर तो वह पढ़ न सकता था परन्तु हाँ काग़ज़ का स्पर्श, रंगीन रेशम के स्पर्श जैसा था। उसने धीरे से किताब मक़बूल के हाथ में दे दी।

मक़बूल नें किताब खोली। एक पन्नें पर संसार का मानचित्र था। मक़बूल ने पहलें अपनें देश पर उंगली

रखी और कहा– "यह हिन्दुस्तान है– हमारा देश" फिर ऊपर उत्तर की ओर एक अन्य देश पर उगंली रखी और कहा– "आज से तीस वर्ष पूर्व यह देश भी हमारे देश की भाँति विट्टियों का देश था..............

रात्रि सघन थी, कहानी बहुत लम्बी थी परन्तु इस रात्रि का एक एक क्षण और इस कहानी का एक एक शब्द राघवराव के लिये बहुमूल्य था। उसे अनुभव हुआ कि उसने चन्दरी के पवित्र वक्ष में जिस नव-वंसत के बूटे की बहार देखी थी उस की झलक इन शब्दों मे मिलती थी। अपने अन्तर में शताब्दियों की अतृप्त तृष्णा ले कर वह आया था, उसकी तृप्ति यहाँ सम्भव थी। बन्कू की जिस भव्यशाली मेहराब ने उसका सिर झुका दिया था उस से बड़ी मेहराबें विट्टी के बाहुबल ने झुका डाली थी। शब्द मक़बूल के मुख में निकल रहे थे और राघवराव के दिल में उतर रहे थे और बीच में ऐसी कोई शक्ति न थी जो उन्हें रोक सकती। राघवराव को एक दिशा का ज्ञान हो रहा था और उस दिशा का मार्ग दिखाई दे रहा था। पहले जिस

चीज़ का कोई आशय न था, आज उसने उसे एक अर्थ दिखाई दिया। जहाँ अन्धा अनुभव था वहाँ प्रकाश की लहरें दौड़नें लगी। जहाँ अनुभूति को किनारा न मिलता था वहाँ उसे ठोस धरती दिखाई दीं। और राघवराव ने बड़ी दृढता से उस धरती पर अपनें पग जमा लिये और अपने मन में कहा-- मैं जवान हूं और यह जो कुछ सुन रहा हूं यह भी जवान है-- इस लिए बीज बोया जायगा और फ़सल काटी जायगी।

और राघवराव को आज तक भी ज्ञात न होसका कि उस रात कब तक कितनी देर तक वह कहानी चलती रही। वह कब तक जागता रहा, कब सोया, उसे केवल इतना याद है कि वह और मक़बूल दोनों लिहाफों में लेटे हुये थें वह सुन रहा था और मक़बूल सुना रहा था और पासमें भूमि पर सुरैया सो रही थी और उस के पास नन्हीं आमना हल्के २ सांस ले रही थी और उसका एक नन्हा हाथ बिस्तर से निकला हुआ था और कमरे में टेबल लैम्प का दूधिया प्रकाश दीवार की छायाओं में विकम्पित था।

इस के पश्चात् उसे याद नहीं कि वह कब सोया, केवल इतना याद है कि बहुत रात गये सहसा उसकी आँखें खुल गई और उसने देखा कि उसके पाँव लिहाफ़ से बाहर निकले हुअे हैं और सुरैया लिहाफ़ को उसके पावों में

मोड़ रही है। लिहाफ़ को मोड़ने में सुरैया की उंगलियाँ राघवराव के पाँव से छू गई और जाने उसकी किन कोमल भावनाओं को उन उंगलियों ने छू लिया कि उसकी आँखें अश्रुओं से डबडबा आई। और उसने अपनी डबडबाई हुई आंखों से सुरैया को उसके बिस्तर से घूम कर मक़बूल के बिस्तर का लिहाफ़ ठीक करते हुये देखा, फिर बच्चों के बिस्तर की सलवटें दूर करते हुये देखा। फिर निश्चिन्त हो कर सुरैया अपनी आमना का हाथ अपने हाथ में ले कर सो गई। और आंसू राघवराव की आंखों से छलक आये। परन्तु राघवराव ने इन आंसुओं को पोंछा नहीं क्योंकि येह ग़म के आंसू नहीं थे, ख़ुशी के आंसू थे। वह आज अपने घर आया था।

राघवराव कुछ क्षणों के लिये इसचित्र पर रुका। फिर किसीने उसकी विचार शृंखला को भंग कर दिया। पहले ज़ंजीरों के खनकने और फिर काल कोठरी का द्वार खुलने की आवाज़ आई। परन्तु राघवराव अपने स्थान से हिला नहीं क्योंकि वह हिल भी नहीं सकता था। फिर उसे भूमि पर भारी पगध्वनि सुनाई दी और वार्डन ने आ कर उसके हाथों की हथकड़ी खोली। जेल के सुप्रिन्टेंन्डेन्ट ने उसे खड़ा हो जाने को कहा— राघवराव धीरे से खड़ा हो गया। खड़ा होने की प्रसन्नता उसकी रग रग में एक क्षण

के लिये दौड़ गई। दूसरे क्षण डण्डाबेड़ी उसके घुटनों से टकराई और उसके घुटनों के घाव में तीव्र चुभन और पीड़ा का अनुभव बढ़ गया। फिर वह सीधा खड़ा हो गया।

सुपरिन्टेन्डेन्ट के हाथ में एक भूरा कागज़ था। उसके हाथ काँप रहे थे। राघवराव नें देखा कि आज्ञा सुनाते समय उसके भाव-विहीन चेहरे पर भी पसीने की बून्दें छलक आंई। इस आज्ञा में राघवराव की अपील अस्वीकृत कर दी गई थी और मृत्युदण्ड को न्यायसगंत घोषित किया था। कल सुबह सात बजे उसे फाँसी दी जायेगी।

सुप्रिन्टेंन्डेन्ट ने रूमाल से अपना चेहरा पोंछा और बन्दी से पूछा– "तुम्हें कुछ कहना है ? "

उत्तर में राघवराव केवल मुस्कराया।

कुछ क्षणों के लिये सुप्रिन्टेन्डेन्ट राघवराव को घूरता रहा। ऐसे बन्दी से मिलने का उसका प्रथम अवसर था। अपनी तीस वर्ष की नौकरी में उसने हर प्रकार के बन्दी देखें थे– बड़े बड़े पक्के डकैत, जिन्हें फाँसी का कोई डर न था। परन्तु वे भी फाँसी की आज्ञा सुनते ही सरकार या जज को गालियाँ देने लगते थे। बन्दी, जो रोने लगते थे। बन्दी जिनका मूत्र निकल जाता था। बन्दी जो मूर्छित हो जाते थें। बन्दी जो पागलों की भांति काट खाने को दौड़ते थें। बन्दी जो हाथ जोड़ कर भगवान से विनती करनें लगते थे। परन्तु ऐसा बन्दी उसने

कभी नहीं देखा था जो फांसी की आज्ञा सुनकर इस प्रकार चुपचाप मुस्करा दे। उसने घूर कर बन्दी के चेहरे की ओर देखा— कदाचित् वह उस मुस्कराहट के पीछे किसी भय, किसी लालसा किसी सुप्त दुर्बलता को उभरते हुये देखना चाहता था। परन्तु जेल सुप्रिन्टेन्डन्ट इस कार्य के लिये अनुपयुक्त था। उसने जीवन भर मुजरिमों के चेहरे पढ़े थे - वह एक मनुष्य का चेहरा कैसे पढ़ सकता था। सुप्रिन्टेन्डेन्ट मन ही मन में कुछ लज्जित और कुछ क्रुद्ध हो कर काल कोठरी से शीघ्र २ पग उठाता हुआ चला गया।

उसके जाने के पश्चात् दोनों वार्डर देर तक मौन निस्तब्ध खड़े रहे। फिर आपस में कानाफूसी करने लगे। अन्त में उनमें से एक वार्डर जो बड़ा लगता था आगे बढ़ा और बोला— "हमको आर्डर है कि तुम को बांध कर रखना। पर हम तुमको बांध कर नहीं रखेगा। हम तुम्हारे बाजू बांध के नहीं रखेगा। फिर तुम इधर उधर कोठरी में चल फिर सकता।

राघवराव ने कहा— "यदि तुम्हारी नौकरी शेष हो तो फिर मुझे बांध ही कर रखो।

अब दोनों वार्डर बोले— नहीं हम को फिकर नहीं।

राघवराव चुप हो गया।

फिर वृद्ध वार्डर आगे आया, धीरे से बोला— "तुम को कुछ खाना मांगटा बेटा ? कोई चीज— मिठाई, सरबत

हमको बोलो। हम लाकर देगा।

राघवराव ने कहा– मुझे कुछ नहीं चाहिये। इतना बता दो अब समय क्या है?

वृद्ध वार्डर ने बाहर जाकर गुलाम गर्दिश में कलाक को देख कर कहा– "अब पाँच कलाक का टाइम है। अभी सारी रात पड़ी है। राघवराव ने मुंह फेर लिया। दोनों वार्डर सिर झुकाये वहाँ से चले गये। फिर जंजीर बजी, फिर काल कोठरी बन्द हुई। फिर लोहे के ताले पड़ने की ध्वनि सुनाई दी जैसे किसी गहरे कुएँ में भारी पत्थर गिर जाय। इसके पश्चात् सघन निस्तब्धता, पूर्ण निस्तब्धता।

राघवराव टाँगें फैला कर काल कोठरी में धीरे धीरे घूमने लगा जिस से डण्डाबेड़ी चलते चलते उसके घुटनों के घावों में न लग जाय। वह केवल चार पग ही चल सकता था। फिर दीवार आ जाती थी। चारों दीवारों में चार पग का अन्तर था– एक दो तीन चार ...... एक दो तीन चार। चार पग धरने के पश्चात् उसके पग रुक जाते और उसे मुड़ना पड़ता। इस काल कोठरी में वह टाँगें फैला कर भी न सो सकता था। राघवराव ने एक नये विस्मय से अपने शरीर को देखा– अपनी भुजाओं को, अपनी टाँगों को, अपनी छाती को। उसने अपनी नाक, कान और मुंह को हाथ लगाया था। हर वस्तु पूर्ववत् अपने स्थान पर थी, सुरक्षित थी, गर्म थी, जीवित

थी, श्वास ले रही थी, हरकत कर रही थी। कल यह गर्मी, यह हरकत, यह जीवन, यह चिन्तन, यह विचारों की उड़ान, भुजाओं की फड़क, छाती की धड़कन, अनुभूति का तनाव, सदा के लिये इनका अन्त कर दिया जायगा। किस लिये? मृत्यु का उसे भय न था, जन्म लेना, बढ़ना, बदलना और बदल कर सपने की भांति सुन्दर हो जाना और फिर शनैः शनैः पतझड़ की वृद्धावस्था की ओर जाना और अपने अन्त में एक नये जीवन का उदय देखना— इस क्रिया में वह मृत्यु नहीं जीवन के सृजनात्मक सौंदर्य का निरन्तर अविराम नृत्य देखता था। परन्तु यह कल की मृत्यु कैसी? अभी तो वह वृद्ध नहीं हुआ था। अभी तो उसके शरीर पर एक भी पतझड़ का पत्ता न आया था। अभी कलियाँ चटकी न थीं, पुष्प खिले न थे, मेघ बरसे न थे, सप्त रंग धनुष चमका न था, बुलबुल चहकी न थी और जब तक बुलबुल नहीं चहकती वृक्ष का जीवन परिपूर्ण नहीं होता। फिर किस लिये उसे भरी जवानी में मौत आई थी।

राघवराव काल कोठरी के ठण्डे सीले फ़र्श पर उकड़ूँ बैठ गया। उसने अपनी ठोड़ी डण्डाबेड़ी के नौक पर रख दी और बिचारों में खो गया। मक़बूल ने डाक्टर से उसका इलाज करवाया था। मक़बूल ने उसे फिर पढ़ना लिखना सिखाया था। मक़बूल ने कुछ समय पश्चात् उसका रिक्शा चलाना भी छुड़वा दिया था जिससे उसके फेफड़ों

को हानि पहुंचती थी और उसे काग़ज़ की मिल में नौकर करा दिया था। मिल में आकर राघवराव को वह सब कुछ जाँचने और परखने का अवसर प्राप्त हुआ जो उसने मक़बूल से पढ़ा था। मिल में आकर उसनें उस खुले षड्यन्त का विस्तृत जाल देखा जो भारत के शहरों के बड़े बड़े पूंजीपतियों से गाँव के जमीदारों तक फैला हुआ था, जिसके तार जीवन के प्रत्येक विभाग में विष की लकीर की भांति फैले हुये थे। उसने यह भी देखा कि यहाँ हर पग पर नये जीवन को आगे बढ़ाने के लिये, परिस्थितियों को बदलने के लिये, मानव को ऊंचा उठाने के लिये, पुरातन जीवन से टक्कर लेनी पड़ती है। मिल में आकर राघवराव ने संघर्ष करना सीखा— न केवल संघर्ष करना सीखा बल्कि नवजीवन के उस शृंगारकर्ता को देखा जिसके हाथों में लकड़ी के पुराने टुकड़े और कपड़ों के गलेसड़े चीथड़े काग़ज़ के सुन्दर पृष्ठों में बदल जाते हैं। उसनें देखा कि उन हाथों में निर्जीव लोहा दिल की भांति स्पन्दित हो उठता है और पिघल कर किसान की हल, मोटर का पुर्ज़ा और फूल पिरोने वाली सूई बन जाता है। जब उसने नव-जीवन के इस शृंगारकर्ता को देखा जो उसे भूगर्भ में दबी हुई उन शताब्दियों का ध्यान आया जो कोयले में परिवर्तित हो गई हैं; उस युग का ध्यान आया जो लोह-घात में ढ़ल गया; उस सौन्दर्य का ध्यान आया जो रेडियम में जम गया। और जब उसे यह ज्ञात हुआ तो

गर्व से उसका सिर ऊंचा हो गया। उसने दृढता से अपने साथियों के हाथ पकड़ लिये क्योंकि यही हाथ थे जो भूगर्भ में छिपे इन खज़ानों को अंधकारमय गहराइयों से निकाल कर ला सकते थे और मानव जीवन को उत्तम और सुन्दर बना सकते थे। अब वह इन हाथों को कभी नहीं छोड़ेगा क्योंकि यह भविष्य को बेच देने वाले नफ़ाखोरों के हाथ नहीं थें, मज़दूरों के हाथ थे जो नवजीवन के निर्माता हैं।

मिल की एक वर्ष की नौकरी में राघवराव ने बहुत कुछ सीख लिया जो वह दस वर्ष के संघर्ष में भी किसी अन्य स्थान पर इतने स्पष्ट रूप में न सीख सकता। उसने आत्मविश्वास से लड़ना, हार से निरुत्साह न होना और हड़ताल द्वारा लड़ाई को आगे लेजाना सीख लिया। यहाँ पर भी उसकी टक्कर मिल मालिकों के गुन्डों से हुई थी और इन गुन्डों के स्वभाव में वहीं तत्व मौजूद थें जो उसके गाँव में देशमुख के गुन्डों के स्वभाव में थे। परन्तु यहाँ इन गुन्डों का इलाज गाँव से आसान था। फिर भी कई बार उस पर प्रहार हुये, उसे छुरे और लाठियों का सामना करना पड़ा मिल से निकालें जाकर छै: मास कारावास में रहना पड़ा।

कारावास में उसकी भेंट नागेश्वर से हुई— अपनें गाँव के ग्वाले नागेश्वर से। और राघवराव नागेश्वर को जेल में देख कर बड़ा चकित हुआ। परन्तु शीघ्र ही नागेश्वर

ने इस आश्चर्य को दूर कर दिया। नागेश्वर ने उसे बताया कि श्रीपुरम का गाँव अब वह पुराना गाँव न रहा था। वहाँ भी जीवन बदल रहा था। शताब्दियों के कुचले हुये विट्टियों ने, कमेरों ने, ग्वालों ने और जगंल में रहने वाले कोया लोगों ने अर्थात् इन सब लोगों ने जिनके पास भूमि न थी, अपनीं एक सभा बना ली थी और ये सब लोग मिल कर जगन्नाथ रेड्डी से, जिसके पास चालीस गाँव की भूमि थी, अपनी धरती की माँग करने गये। प्रत्येक दिन मार धाड़ होती थी, विट्टी पकड़े जाते थे इन पर भांति भांति के अत्याचार किये जाते थे। परन्तु आग फैल रही थी और विट्टी लोग शेर होते जा रहे थे। कई स्थानों पर विट्टियों ने ज़मीदार की अनुमति लिये बिना भूमि में बुआई आरम्भ कर दी थी। नागेश्वर को इसी अपराध में पकड़ कर कारावास में डाल दिया गया थ।

राघवराव को ये बातें सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ और प्रसन्नता भी हुई। उसे इस बात पर अब भी विश्वास न आता था कि जगंल में रहने वाले क़बायली, जीवन में कुचले हुये कोया लोग इतने साहसी हो सकते हैं, हज़ारों वर्षों की दासता को फाँद कर कुछ क्षण में नये इंसान बन सकते हैं।

नागेश्वर ने कहा– "कोया लोग तो इस आंदोलन में सब से आगे हैं। उनकी जत्थे बन्दी देखो तो आश्चर्य-चकित रह जाओ। और हमारे ग्वालें– तुम विट्टियों से आगे

निकल गये हैं। क्या समझते हो तुम हम ग्वालों को?"
नागेश्वर हंसा और अपने सिर पर हंसते हुये हाथ फेरा। फिर उसका चेहरा एकाएक गंभीर हो गया।

"क्या बात है?" राघवराव ने पूछा।

नागेश्वर ने अपना सिर झुका कर उसे अपने मस्तक का निशान दिखाया जो मस्तक से आरम्भ हो कर चोटी तक जाता था। एक गहरा लम्बा निशान— जैसे किसी ने खाल जला डाली हो और राघवराव ने देखा कि सचमुच उस लम्बे निशान पर एक बाल भी न था।

"यह कैसे हुआ?" राघवराव ने व्याकुल होकर पूछा।

"जब हमें पकड़ कर ले जाया गया तो हमें ज़मीदार के अस्तबल में बन्द कर दिया गया। मुझे सबसे अलग बन्द करके रखा। दो दिन खाने पीने को कुछ नहीं दिया। मार पीट भी की परन्तु मैं ने अपने साथियों के नाम नहीं बताये। फिर उन्हों ने यहाँ मेरे सिर के बाल जला डाले और लोहे की एक कील से मेरी खाल उछेड़ डाली। वे मेरी खाल उछेड़ते जा रहे थे और हंसते जा रहे थे और कहते जा रहे थे— 'यह हम तुम्हारे सिर पर मास्को रोड बना रहे हैं। यहाँ से तुम सीधे मास्को पहुंच जाओगे, समझे?' परन्तु मैं क्या समझता। मैं तो मारे पीड़ा के तड़प कर मूर्छित हो गया था।"

नागेश्वर बहुत देर तक चुप रहा। राघवराव भी कुछ न बोल सका।

अन्त में नागेश्वर ने अपने सिर को सहलाते हुये बड़ी गंभीरता से राघवराव से पूछा– "भैय्या मास्को कहाँ है?"

राघवराव ने अहा– "तुम नहीं जानते ?"

नागेश्वर ने सिर हिलाकर कहा– "नहीं भैय्या।"

राघवराव ने कहा– "मास्को एक शहर है" और फिर ठहर कर कहा– "और मास्को एक विचार भी हैं। नागेश्वर कुछ न लमझा। उसने बेबसी से सिर हिला कर कहा– "मैं पढ़ा लिखा नहीं हूं। मैं तो जंगल का ग्वाला हूं। मै तो इतना जानता हूं कि मैं ने अपने जीवन में और मैं ने क्या मेरे बाप नें और मेरे बाप के पुरखों ने कभी जन्म जन्मान्तर में भूमि नहीं देखी थी। अब जो हमें भूमि मिलने की आस लगी है तो हम जीते जी इस आस को कैसे छोड़ सकते हैं।"

राघबराव ने कहा– "इसी आस का नाम मास्को है।" नागेश्वर ने बड़ी दृढता से कहा– "यदि ऐसा है तो फिर हुआ करे। फिर चाहे वे मेरे सिर को छोड़ मेरे सारे शहर पर मास्को रोड बना दें, मै इस आस को नहीं छोड़ूंगा।"

राघवराव ने नागेश्वर का हाथ जोर से दबाया– कहने लगा– "जेल से छूट कर मैं तुम्हारे साथ अपने गाँव जाऊंगा।"

परन्तु जिस दिन राघवराव रिहा हुआ उस दिन नागेश्वर

रिहा नहीं हुआ। उसे पन्द्रह दिन और जेल काटनी थी। इस लिये राघवराव को अकेला ही गाँव जाना पड़ा। जेल के द्वार पर मक़बूल और अन्य साथी स्वागत के लिये उपस्थित थे। जब राघवराव ने मक़बूल को बताया कि वह गांव जाना चाहता है तो मक़बूल बहुत प्रसन्न हुआ। उसका अपना भी यही विचार था कि राघवराव को अपने गांव जा कर वहां के किसानों के आंदोलन को देखना चाहिये। स्थिति बिगड़ती जा रही है, मक़बूल ने बताया-- किसानों का प्रबल आंदोलन निज़ाम शाही पुलिस से नहीं दबता। इस लिये निज़ामशाही पुलिस और रज़ाकार मिल कर जगन्नाथ रेड्डी के इलाक़े में किसानों का दमन करने की चेष्टाएं कर रहे हैं। "परन्तु" राघवराव ने पूछा "यह जगन्नाथ रेड्डी तो हिन्दू है-- और रज़ाकारों की संस्था एक मुस्लिम संस्था है। फिर इन दोनों में मेल कैसा?

मक़बूल ने कहा-- "नफ़ाखोरी और अत्याचार का कोई धर्म नहीं होता। फिर हमारे देश की तो रीति है कि जब प्रतिक्रियावादी शक्तियां पराजित होने लगती हैं तो सांप्रदायिकता का सहारा लेती हैं।"

चलते समय मक़बूल ने राव को कुछ पते बताये जहाँ वह मार्ग में रुक सकता था और उन लोगों से भेंट कर सकता था, जिन्हें स्थानीय परिस्थितियों का पूर्ण ज्ञान न था। उन पतों को रट कर और मक़बूल और अन्य साथियों से गले मिल कर राघवराव अपने गांव को चल दिया।

ज्यों ज्यों राघवराव हैदराबाद से दूर होता गया और गाँवों की ओर बढ़ता गया उसे सामाजिक अव्यवस्था, व्यग्रता और निराशा के चिन्ह बढ़ते दिखाई दिये। पहले कुछ देहात में तो उसे किसान लोग काम करते दिखाई दिये थे, परन्तु ज्यों ज्यों वह हैदराबाद से दूर होता गया उसको सामने फैले हुए दृश्य में मनुष्य का अस्तित्व कम दिखाई देता चला गया। नीम के वृक्ष थे, पीपल के वृक्ष थे, बाजरे के खेत थे, सैलू की झाड़ियाँ थीं, कीकर के वृक्षों पर आकाश बेलें चढ़ी हुई थीं। और मार्ग में स्थान स्थान पर टीलों के ऊपर एक काली चट्टान के ऊपर दूसरी चट्टान और उसके ऊपर तीसरी चट्टान इस प्रकार रखी

हुई थी मानों किसी दैत्य-बालक ने खेलते समय उन्हें एक दूसरे के ऊपर रख दिया हो। यह सब उसकी चिरपरिचित दृश्यावली की छोटी छोटी चीजें थीं। परन्तु वह जिसने बाजरे के खेत बोये थे, जिसने खेत की मेड़ों पर वृक्ष उगाये थे, जिसने कूएं खोदे थे और खेतों और गाँव के बीच पगडण्डियां बनाई थीं अर्थात् वह प्राणी जिससे भूमण्डल में धड़कन, प्रकृति में सौन्दर्य और वातावरण में परिवर्तन पैदा होता है, वही प्राणी दिखाई नहीं देता था। चित्र वही था, वहीं रंग थे, वही वातावर्ण था जो उसके जीवन में बाल्यकाल से रचा हुआ था परन्तु फिर भी आज प्रत्येक वस्तु न जाने क्यों अधूरी सी निर्जीव सी लगती थी– मानों किसी नें चित्र की छाती में एक छेद कर दिया हो। बार बार राघवराव की दृष्टि उस चित्र पर पड़ती थी और फिर लौट कर उस केन्द्रीय वस्तु को खोजने लगती, जो आज ओझल थी।

करीमनगर गाँव में यल्ला रेड्डी से मिलना था परन्तु जब वह गाँव के निकट पहुंचा तो उसे सारा गाँव जला हुआ दिखाई दिया। पचास साठ घर थे परन्तु सब राख। जिन घरों पर फूंस और नारियल के छप्पर थे वे तो बिल्कुल राख हो चुके थे। केवल थोड़े से घरों की मिट्टी की दीवारें खड़ी रह गई थीं। यल्ला रेड्डी का मकान एक मंजिल का था और कच्ची मिट्टी का बना हुआ था। परन्तु इस घर की दशा अन्य घरों से अच्छी थी क्योंकि यल्ला रेड्डी की आर्थिक दशा अन्य ग्राम वासियों से अच्छी

थी। इस के घर की केवल दीवारें खड़ी थीं। घर का द्वार खुला हुआ था। आँगन में शाहआबादी पत्थरों का चौक था। आँगन की मोरी पर दो बड़े बड़े पत्थर रखे हुये थे। यहाँ पानी का लोटा पड़ा था। आँगन के मध्य में पल्ला रेड्डी का शव पड़ा था– सिर अलग था, धड़ अलग था। पल्ला रेड्डी की आखें खुली हुई थीं और राघवराव जब तक आँगन में खड़ा रहा, पत्थर की मूर्ति की भांति एक टक इन आखों को देखता रहा। फिर बड़े प्रयत्न से उसने अपनी दृष्टि वहाँ से हटाई और सिर झुका कर धीरे धीरे वहाँ से बाहर निकल गया।

राघवराव मक़बूल की ओर से यल्ला रेड्डी के लिये एक सन्देश लाया था। परन्तु सन्देश देने की आवश्यकता न पड़ी। यल्ला रेड्डी ने स्वयं ही इस सन्देश के एक एक शब्द को पूरा कर दिखाया था।

गाँव से निकल कर वह बोधन बन की ओर हो लिया। मार्ग में उसे बहुत से बाजरे के खेत जले हुये मिले। अरण्ड के एक बूटे के समीप उसे एक युवती का शव मिला जिसे गीदड़ खा रहा था। गीदड़ उसकी आहट पाकर भाग गया और चट्टानों को फाँदता हुआ, पत्थरों को लुढ़काता हुआ टीले की दूसरी ओर चला गया। राघवराव ने शव को उठा कर एक खेत की मेंड पर रख दिया और फिर मेंड को तोड़ कर उसकी मिट्टी और छोटे छोटे पत्थर

शव पर डाल कर उसे दबा दिया और हाथ झाड़ कर आगे चला गया। उसकी आखें जलने लगी थीं और उसके गले में कांटे से खड़े हो गये थे और उसे इतनी तीव्र प्यास लग रही थी कि वह पानी के स्थान पर रक्त भी पी सकता था।

बोधनवन की घनी छाया में उसके शरीर की उष्णता कुछ कम हुई। छायादार वृक्षों में पक्षी कलरव कर रहे थे या उसके अपने पाँव की चाप की या झाड़ियों में खरगोशों की सर्सराहट थी अन्यथा चारों ओर पूर्ण निस्तब्धता की एक धूमिल पगडण्डी पथप्रदर्शन करती हुई वन के बीच में चली जाती थी।

राघवराव के कान इस निस्तब्धता में बहुत सतर्क हो गये। वह सावधान भी था और सतर्क भी था और कुछ आशा भी करता था कि यदि कोई पता मिलेगा तो यहीं मिलेगा। कभी कभी चलते चलते उसे भ्रम होता जैसे वृक्षों के पीछे से अनेकों दृष्टियां उसे घूरती हुई देख रही हैं। जैसे कई हाथ पीछे से उसकी पीठ में छुरा झोंकने के लिये उठ रहे हैं। वह सहसा भयभीत हो कर पीछे देखता। परन्तु वहाँ तो कोई न था। वन में वह अकेला था। एक बड़े टीले पर सेलू की झाड़ियां थीं। जब वह इस टीले के निकट से गुज़रा तो किसी ने आवाज़ दी--
"ठहर जाओ।"
राघवराव ठहर गया।

फिर टीले पर उसने एक स्त्री को खड़े होते हुये देखा-- काला वृद्ध कर्कश चेहरा-- सिर पर सफ़ेद केश, हाथों में बन्दूक, ऊंचा लम्बा क़द-- स्त्री ने बन्दूक सीधी की। राघवराव ने उसे पहचान लिया-- "कानत्तमा" स्त्री ने बन्दूक की नाली नीचे करली और माथे पर हाथ रख कर उसे पहचानने का प्रयत्न करने लगी।

राघवराव चिल्लाया-- "मैं राघवराव हूं; राघवराव, मक़बूल का साथी।

स्त्री टीले से नीचे दौड़ने लगी। उसके पीछे पीछे तीन चार पुरुष टीले के पीछे से निकल कर भागे आ रहे थे। राघवराव के अत्यन्त निकट आ कर कानत्तमा ने उसे पहचान लिया। वह उसके सिर पर हाथ फेर कर बोली-- अरे बहुत दुर्बल हो गये हो बेटा। मैं तुम्हें पहचान न सकी।"

राघवराव बोला-- "जेल कोई माँ का घर थोड़े ही होता है।"

कानत्तमा बोली-- "तुम कब रिहा हुये?"

राघवराव ने कहा-- "परसों।"

कानत्तमा ने पूछा-- मक़बूल कुशलपूर्वक तो है?"

कानत्तामा के कण्ठ में बड़ा स्नेह था, बड़ी गहरी ममता थी, बड़ी सच्ची पुकार थी-- राघवराव को अपना कण्ठ रुंधता हुआ प्रतीत हुआ। यह स्त्री जो यल्ला रेड्डी की माँ थी

जिस के शव को यह अभी करीमनगर मे देख कर आया था, यह माँ राघवराव की कुशलता पूछ रही थी मक़बूल की कुशलता जानने को आतुर थी परन्तु अपने बेटे के लिये, अपने इकलौते बेटे के लिये, जो किसानों के अधिकारों की रक्षा करते करते मारा गया था, उसके सम्बन्ध मे कुछ नहीं।

इस लिये राघवराव ने साफ़ साफ़ पूछ लिया– "यह घटना कब हुई?"

कानत्तमा ने बात को पलट कर कहा– हमारे गाँव की यह घटना कोई नयी घटना नहीं है। जहाँ किसानों ने जागीरदारों और देशमुखों को लगान देने से इन्कार किया है, वहाँ यही कुछ हुआ है और कदाचित् इससे भी बुरा। हमारे गांव पर तो रात्रि में आक्रमण हुआ, इस लिये रात्रि के अंधकार में वे लोग गांव को जला गये। दिन में तनिक कठिन होता। परन्तु एक बात यह भी हुई कि रात्रि के अंधकार में बहुत से किसानों को गांव से भाग कर जंगल में शरण लेने का सुअवसर मिल गया। वे सब लोग इस समय मेरे साथ हैं।

राघवराव कानत्तमा के मुख की ओर देख रहा था। पर भय नहीं था व्याकुलता नहीं थी। वह अविचलित भाव से बातें कर रही थी। यल्ला रेड्डी की माँ सचमुच नई माँ थी। वह उसकी निर्भयता और धैर्य की कई कहानियां

सुन चुका था। किस प्रकार वह किसान सभा में यल्ला रेड्डी के विरुद्ध भी बोल उठती थी क्योंकि यल्ला रेड्डी एक सम्पन्न किसान था और कई बातों में वह स्थिति को समझने से इन्कार कर देता था। ऐसे अवसर पर उसकी माँ ही उसे ठीक मार्ग पर लाती थी। राघवराव ने कानत्तमा के मुख की ओर देखा— और उसे तैलगू की वह पुरानी कहावत याद हो आई जो एक आदर्श नारी के सम्बन्ध में है— उस कहावत के अनुसार आदर्श नारी वह है जो सेवा करने में दासी हो, परामर्श देने में मंत्री हो, प्रेम करने में रम्भा हो, भोजन खिलाने में मां हो और युद्ध करने में सैनिक हो।

कानत्तमा ने कहा— अब क्या होगा। किसान तो भय के मारे वन में जा छिपे हैं।

राघवराव ने कहा— "मक़बूल ने कहा था और अन्य साथियों का भी यही कथन है कि अब लगान न देने और टैक्स न देने का समय बीत गया है। अब किसान-सभाओं को स्वयं भूमि किसानों में बाँट देनी चाहियें। जिन के पास भूमि नहीं है, वे ऐसे समय भाग कर वन में शरण न लेंगे तो क्या करेंगे। गांव में उनका क्या है, जिसको रक्षा करते फिरें? उन्हें गांव में भूमि दो।" "ठीक है।" कानत्तमा के पीछे खड़ा हुआ एक व्यक्ति बोला— राघवराव को आकृति से वह जंगल का कोया

प्रतीत हुआ। भूमि बन के वासियों को भी मिलनी चाहिये। फिर गाँव और बन का सम्बन्ध दृढ हो जायगा।"

"ठीक है" राघवराव बोला— "आंधरा के वनों ने विदेशी साम्राज्य के विरुद्ध कोई कम संघर्ष नहीं किया है। जंगली कबीलों के सरदार अल्लवरी सीताराम राजू की लड़ाई को आंधरा का बच्चा बच्चा जानता है। आज भी लोग कहते हैं कि जहां आंधरा के बन हैं, वहां अल्लावरी सीताराम राजू आज भी जीवित है और शूरवीर कोयाओं के साम्राज्य के विरुद्ध युद्ध के लिये प्रेरित कर रहा है।"

कानत्तमा के साथियों में से एक मादीगा (चमार) और एक माला (कमेरा) दोनों एक साथ बोल पड़े— "हाँ हाँ ठीक है। जब भूमि हमारी हो जायेगी तो देखें कौन माई का लाल किसानों के हाथ से उनकी भूमि छीनता है। भूमि तो गांव के मादीगे और माले भी लेंगे।" कानत्तमा ने थोड़ी देर के लिये विचार किया— फिर अपने पीछे खड़े हुये कोया से बोली— "रामुल बन में सब किसानों को सूचना दे दो, हम सब लौट कर करीमनगर जांयगे। वहां पर भूमि किसानों में बाँटी जायगी।"

रामुल भागता हुआ चला गया। मादीगा और माला भी उसके पीछे पीछे सूचना देने के लिये चले गये।

राघवराव ने कहा— "मुझे प्यास लगी है!"

कानत्तमा टीले के पीछे से मिट्टी का एक घड़ा ले आई। राघवराव ने उसे मुहं से लगा लिया और आधा कर दिया। पानी पी चुकने के पश्चात् उसने कहा– "माँ तुम यह सब कर लोगी न? या मैं तुम्हारी सहायता को ठहर जाऊं?" कान्तामा ने कहा– "मैं सब कर लूंगी राघव– तुम जाओ।"

जब राघवराव चलने लगा तो उसने देखा कि कानत्तामा टीले की ओट में बैठी हुई बन्दूक घुटनों पर रखे उसे अनोखी दृष्टि से देख रही है– परन्तु राघवराव ने इस पर अधिक ध्यान नहीं दिया। वह अपने मार्ग पर बढ़ गया। सहसा कानत्तमा ने उसे पीछे से पुकारा।

"सुनो राघव"

राघव ने मुड़ कर देखा। परन्तु कानत्तामा चुप थी– ख़ाली ख़ाली दृष्टियों से व्योम में देख रही थी।

कई क्षणों की निस्तब्धता के पश्चात् कानत्तमा वहीं बैठे बैठे धीरे से बोली– "क्या उसकी आखें अभी तक खुली हुई है?"

राघवराव का सिर चकरा गया। वह अपनी जिव्हा से कुछ न कह सका। उसने धीरे से अपना सिर हिला दिया।

कानत्तमा कुछ देर तक शून्य में ताकती रही। फिर उसका सफ़ेद सिर उसके घुटनों पर झुक गया। आंसू उसकी आखों से निकल कर बन्दूक की नाली पर चुपचाप बहते गये।

राघवराव का जी चाहा कि........ परन्तु उसने अपने

पर संयम कर लिया और कानत्तामा को अकेली छोड़ अपने मार्ग पर बढ़ गया। यह बात नहीं थी कि वह मनुष्य नहीं था। यह बात भी नहीं थी कि उसके अन्तर में आंसू नहीं थे यह बात भी नहीं थी कि उसे अपने साथी यल्ला रेड्डी में स्नेह नहीं था। परन्तु इन सब बातों के होते हुये भी वह अपने मार्ग पर बढ़ गया और जब वह अपने मार्ग पर चल रहा था तो उसके मस्तिष्क में केवल दो विचार थे। एक विचार यह कि मानव-प्रगति का पथ कितना दुर्गम एवम् कष्टपूर्ण है। कितने रिसते हुये घावों, कितने बहते हुये आंसुओं, कितने तड़पते हुये दिलों को रौंद कर मानवप्रगति के पथ पर एक पग बल्कि आधा पग बल्कि आधे का आधा पग आगे बढ़ता है।

एक विचार, और दूसरा विचार....... कानत्तामा एक नई माँ है। उसकी तरसी हुई ममत्व की भावना कोई नया मार्ग ढूंढ निकालेगी। जब माँ का एक बच्चा मर जाता है तो उसकी गोद इतनी विशाल हो जाती है कि हज़ारों बच्चे उसकी गोद में सिमट आते हैं। इस लिये राघवराव को कानत्तामा के लिये विशेष चिन्ता न थी। इस लिये वह चुपचाप कानत्तामा के बहते हुये आंसुओं को छोड़ कर अपने मार्ग पर चला गया।

बहुत आगे जाकर राघवराव को एक विचार आया और अब इस काल कोठरी में उसका ध्यान करके उसका मुख हर्ष से खिल उठा क्योंकि इस विचार के आते ही

और उस पर चलते ही राघवराव ने बहुत से आसुओं को मुस्कराहटों में बदल दिया। और वह विचार यह था– वह एक सन्देशवाहक क्यों न बने? क्यों न इस सन्देश को दूर दूर तक पहुचाये और साथ साथ इस पर अमल करे। फलस्वरूप उसने वेलमपल्ली के गाँव से भूमि विभाजन के शुभ कार्य में भाग लेना आरम्भ किया। स्वयं अपनी आखों से उसने बे घर और बिना भूमि वाले किसानों को आत्मनिर्भरता, हर्ष और सफलता के भावों से ओतप्रोत होते हुये देखा। जली हुई झोपड़ियाँ आबाद होने लगीं। गाँवों में सफ़ाई के लिये नालियाँ बनाई जाने लगीं। भूमि में हल चलने लगे और किसान की छाती इतनी फैल गई कि अत्याचारियों के कलेजे काँपने लगे। जो कल के हाकिम, स्वामी और जुल्म ढ़ाने वाले थे, वे दुम दबा कर भाग गये और शहरों में शरण लेने लगे। बेलम पल्ली के किसानों ने राघवराव के साथ एक दस्ता किसानों का कर दिया जो उसे अन्य गावों में भूमिविभाजन के कार्य में सहायता देगा। इस प्रकार जैसे २ राघवराव एक गाँव से दूसरे गाँव बढ़ता गया, उसके साथ ग्रामवासियों की एक भीड़ बनती चली गई। एक लहर थी जो रोके न रुकती थी। एक बाढ़ थी जो उमड़ी चली आती थी। वह पग जो आधे के आधे का आधा उठता देखा गया था, अब दैत्यों की भांति छलांगे मारने लगा। इस बाढ़ के पग धरती पर थे और चोटी आकाश से मिली हुई थी, और

उसके गीत की गूंज समस्त संसार में थी। पहले किसान भूमि में हल चलाता था। आज उसने अपने भाग्य में हल चलाया था। आज आकाश उसकी जेब में था और बन्कू के सब कंगूरे एक २ करके टूट गये थे।

बेल्लम पल्ली से पत्तीपाड़ो और पत्तीपाड़ो से श्रीपुरम तक जीवन का एक उत्सव मनाया जा रहा था। ऐसा उत्सव उसने अपनी धरती पर आज तक कभी न देखा था। उसे प्रतीत हुआ मानो जेल की दीवार का कोना २ उस हर्ष और उल्लास से जगमगा रहा है। श्वेत झागों को झंझोड़ता हुआ वह तूफ़ान इस काल कोठरी के अन्दर भी घुसा चला आ रहा था जो उसे कलगीदार लहरों पर बिठा कर श्रीपुरम ले गया था।

राघवराव नें अतीत की ओर घूम कर किसानों के उस लम्बे जलूस को देखा जो पत्तीपाड़ो से श्रीपुरम तक

फैला हुआ था। आगे आगे कोया स्वयंसेवकों का दल था। उन के पीछे ग्वालों का दल था। उन के पीछे विट्टियों की पंक्तियाँ थीं। फिर झण्डे वाले थे। फिर शंख बजाने वाले थे, ढ़ोल बजाने वाले थे। उन के पीछे जलूस के मध्य में एक नक्काशीदार बन्द पालकी थी जिसके दोनो ओर लाल २ रेशम के परदे सरसरा रहे थे। इस बन्द पालकी के अन्दर काग़ज़ पत्र थे– काग़ज़ जिन पर खेत गिरवी रखे गये थें, जीवन गिरवी रखे गये थे, सतीत्व गिरवी रखे गये थे। यें सब काग़ज़-पत्र शताब्दियों की दासता और आत्याचार के प्रतीक, किसानों ने ज़मीदारों के काँपते हुये हाथों से छीन लिये थे, और कई स्थानों पर इनको छीनने की आवश्यकता ही न पड़ी थी। ज़मीदार स्वय ही अपनी बन्कू, अपनी गढ़ी, अपने कोट ख़ाली छोड़ कर भाग गये थे।

इस पालकी के पीछे एक खुली पालकी में लोग राघवराव को ले जा रहे थे बल्कि ले जाते हुये दौड़ रहे थे। राघवराव ने पैदल चलनें का अनुरोध किया था परन्तु लोग नहीं माने थें। उसकी पालकी के पीछे नागेश्वर की पालकी थी जो जेल से छूट कर पत्तीपाड़ो के स्थान पर अपने मित्र से आ मिला था। उन के पीछे किसानों की अपार भीड़ थी। ढ़ोल बजाने वाले थे। नृत्य करनें वाले थें और प्रसन्नता से गला फाड़ फाड़ कर नारे लगाने वाले थे। बच्चे, बूढ़े स्त्रियाँ, अन्धे, लंगड़े, अपाहज, सब

अपने अपने घरों से निकल आये थे। आज किसी के द्वार में ताला न पड़ा था। आज कोई चोर न था, कोई अपराधी न था। आज वे सब भूमिधर थे।

धीरे धीरे रेशम के पर्दों से सरसराती हुई बन्द पालकी ज़मींदार की बन्कू के आर पार पहुंच गई। लोगों ने पालकी को बन्कू के अन्दर जा कर उतारा। बन्कू के भीतर गाँव की स्त्रियाँ पहले ही से उपस्थित थीं। उन्हों ने पालकी की आरती उतारी, पुष्प बरसायें, पैसे वार कर फेंके और स्वागत के भजन गाये।

राघवराव इस दृश्य को देखता ही रह गया। अनेकों बार उसने अपने मन में विचार किया था कि जब उसके गाँव में क्रान्ति आयेंगी तो क्या होगा। सहस्त्रों कल्पना-चित्रों में उसने क्रान्ति को होते देखा था– कभी एक फिरते हुये तूफ़ान की भान्ति, कभी एक उमड़ती हुई सैना की भांति कभी लाखों सींगों पर शवों के ढेर उठाये हुये। परन्तु उसकी कल्पना ने इस चित्र को कभी नहीं देखा था कि जब क्रान्ति उसके गाँव में आयेगी तो एक लाजवन्ती दुलहन के रूप में लाल पर्दों की ओट में एक पालकी में बन्द हो कर आयेगी और कोई आरती उतारेगा कोई शंख बजायेगा, स्त्रियाँ भजन गायेगी और वीर किसानों की बन्दूकों पर तिलक लगाये जायेंगे।

और फिर राघवराव ने सोचा– यह भी उसकी भूल थी जो उसने ऐसा सोचा था। भारत में क्रन्ति भारतीय

रूप में आयेगी– वह हमारी संस्कृति, हमारे स्वभाव हमारे लोकगीतों और उसकी सुगन्धों में रस बरसा के आयेगी। उसका रूप विदेशी नहीं होगा। वह होगी अनोखी, विभिन्न, नूतन, ऐसी जो कभी नहीं हुई, ऐसी जो कभी नहीं सुनी गई, कभी नहीं देखी गई। परन्तु इसके होते हुये भी होगी सर्वांग भारतीय और हम उसकी पहचान कर कह सकेंगे– "यह क्रान्ति हमारी अपनी है, यह क्रान्ति हमारी अपनी है।" जैसे वह इस समय इस दृष्य को देख कर कह सकता है– "हाँ यह दृश्य मेरे गाँव का है। हाँ यह दृश्य सचमुच मेरे गाँव का है।"

ठीक इस समय गाँव के सब से बूढ़े व्यक्ति नारायण ने राघवराव के हाथ में पटवारी की जरीब दे दी और उस से कहा– "बेटा भूमि बाँटना आरम्भ कर दो।"

राघवराव ने जरीब हाथ में ले कर कहा– 'इस अवसर पर अपने गाँव के पटवारियों को यहाँ होना चाहिये था। कहाँ हैं श्रीरामा पूतलू?"

इस पर जोर का कहकहा पड़ा– किसी ने कहा– "वह तो ज़मीदार के पटवारी थे, हम निर्धन किसानों के पटवारी थोड़ें ही थें। उनकी जरीब सदा हमारे अहित में चलती थी। इस लिये वह तो ज़मीदार जी के साथ ही चलें गये।"

"और गाँव के पुरोहित श्री सीताराम शास्त्री कहाँ है– इस शुभ अवसर पर उन का आशीर्वाद लेना परम आवश्यक है।"

फिर एक और ज़ोर का क़हक़हा पड़ा– नागेश्वर बोला "ज़मीदार का राजतिलक होता तो पुरोहित जी अवश्य दिखाई देते परन्तु आज तो किसानों का राजतिलक है।"

बहुत से किसान एक साथ विकल हो बोल उठे– "राघवराव जल्दी करो– भूमि के सम्बन्ध में हम किसी पुरोहित पटवारी की प्रतीक्षा नहीं करेंगे। हमने कई शताब्दियों से इस दिवस की प्रतीक्षा की है।"

राघवराव जरीब को हाथ में लेकर बोला– "तो बजाओ ढ़ोल ताशे और चलो खेतों की ओर– आज श्रीपुरम के किसानों की विजय-यात्रा आरम्भ होती है।

राघवराव के पग उठाते ही ढ़ोल बजने लगे, किसान हर्ष से उन्मत्त हो गये, वृद्ध उल्लास के आवेग में रोने लगे और हंसने लगे, स्त्रियाँ विजययात्रा के गीत गाने लगी, किसानों ने इस गीत में अपने कंठ का योग दिया और जीत की घन गरज से समस्त व्योम गूंज गूंज गया।

आदरो गन्डे, परी की कन्डा	कायरता और दुर्बलता से
मरोगन नट्टी, आंधरा पुत्रा	आंधरा पुत्र परिचित नहीं है।
म्मी जात थी ऐंदी परिक्षा	आज हमारी जाति की परीक्षा है
राग वयेला, साग रेया	उठो और सम्मिलित हो जाओ
साग अन्देका, जैत्र यात्रा	वह विजय का जलूस जा रहा है।

राघवराव नें अपनी आँख के कोने से आंसू की एक बूंद चुपचाप पोंछ ली। वह दिन जब भूमि किसान को मिली और उस से अगले चार दिन जब श्रीपुरम में भूमि-विभाजन का कार्य चलता रहा, राघवराव के जीवन के सर्वोत्तम दिवस थे। भूमिविभाजन के समय छोटे छोटे झगड़े भी हुये थे। कोई यह टुकड़ा चाहता, कोई, वह टुकड़ा। कोई अपनी आवश्यकता से अधिक भूमि का इच्छुक था और कोई अपनी अधिक भूमि को कम कर के बता रहा था परन्तु गांव के बड़े बूढ़ों और पंचों की सहायता से, जो भूमि के चप्पे चप्पे से परिचित थे, यह कार्य अत्यन्त कुशलता पूर्वक सम्पन्न हो गया। इस सम्बन्ध में राघवराव को अपने पिता विरैया की हरकतें याद आंई। राघवराव ने निर्णय किया था कि उसके पिताको भूमि सब से अन्त में मिलेगी। जब गाँव के सब अन्य किसानों को भूमि दे दी जायगी तो इस समय जो भूमि बचेगी उसमें से विरैया को भूमि दी जायगी, क्योंकि वह, राघवराव का पिता है।

परन्तु विरैया इस बात को तनिक न समझ सकता था। इस लिये भूमिविभाजन के समय बार बार वह राघवराव के सामने आ जाता और बड़ी विकलता से एक बच्चे की भांति ठिनक कर अपने लिये भूमि की माँग करता और राघवराव धीरे से मुस्करा कर जरीब को

हाथ में लेकर आगे बढ़ जाता। इस पर विरैया अपने बेटे की कठोर हृदयता से तंग आकर दूसरे किसनों से अपने बेटे की शिकायतें करता। कई बार दो चार किसानों ने राघवराव से कहा भी कि वह अपने लिये सब से पहले भूमि बाँट लें। वह उसके पिता को गाँव की सर्वोत्तम भूमि का टुकरा देने को तैयार थे परन्तु राघवराव ने मुस्करा कर उन्हें टाल दिया।

सबके अन्त में जब विरैया निराश सा हो चुका था उस समय विरैया को भूमि मिली और जितनी भूमि उसने अपने लिये और राघवराव के लिये और राघवराव की भावी पत्नी और बच्चों के लिये सोची थी, उससे कहीं अधिक भूमि गाँव के पंचों ने राघवराव की इच्छा के विरुद्ध विरैया को दे डाली।

विरैया भागता हुआ, हर्ष से नाचता हुआ अपने खेतों में चला गया। उसने अपने हाथों में खेत की भुरभुरी मिट्टी को उठाया और उसे हवा में उछालते हुये बोला– "यह भूमि मेरी है, यह भूमि मेरी है।" फिर वह भागता हुआ अपने बेटे के पास आया और उसे गले से लगा कर रोने लगा।

पाँचवे दिन जब भूमि का अन्तिम टुकड़ा भी बट गया और भूमि, भूमि वालों को मिल गई तो राघवराव टहलने के लिये अपने गाँव से बाहर निकला। इस समय संध्या हो चुकी थी और चिन्ता के कुंजों में पक्षी कलरव कर रहे थे और मार्ग में कहीं कहीं सूखे हुये पत्ते पवन के झोंकों से खड़खड़ा उठते थे और बगूलों में चक्कर काट कर खड़ खड़ करते हुए पृथ्वी पर गिर पड़ते थे। राघवराव विचारों में तल्लीन, धीरे धीरे टहलता रहा और धीरे धीरे उसके पग भोगावती नदी की ओर उठने लगे।

पश्चिम में आकाश की लालिमा केवल हल्की सी एक लकीर रह गई थी, जब राघवराव नदी के तट पर पहुंचा। वह एक काले शिलाखंड पर बैठ गया। फिर धीरे धीरे

उसके विचारों की ओट मे निकल कर उसके सन्मुख चन्दरी आगई– हरियाली लिये हुये आखें, लटों में जस्त के झूमर लटकते हुए, लाल लाल पतले होठो पर चंचल मुस्कान।

राघवराव को तनिक ज्ञात न हुआ कि किस प्रकार वह उसके सामने आ गई। क्यों इतनी विह्वलता से, विकलता से, इतनी तीव्र धड़कनों के मध्य में वह उसके सन्मुख कल्पना के संसार में आ खड़ी हुई और राघवराव ने कल्पना ही में उस से पूछ लिया– "चन्दरी तू इस समय कहाँ थीं? किस नदी के तट पर, किस डेरे में बैठी हुई किस की प्रतीक्षा कर रही थी? क्या तेरा वक्ष स्थल आज भी पवित्र है या किसी प्रतीक्षा करने वाले ने तुझे पा लिया हैं।" और सहसा राघवराव को अनुभव हुआ कि वह चन्दरी को कभी नहीं भुला सकेगा–सदैव उसकी प्रतीक्षा करता रहेगा। क्योंकि मनुष्य जिस के प्रेम के लिये तरसता है और उसे प्राप्त नहीं कर सकता, तो फिर आजीवन उसके लिये बिकल रहता है। यह कोई बहुत अद्भुत, बहुत उच्च भावना नहीं है। ऐसी भावना नहीं है जिस के लिये मनुष्य अपने प्राण तज दे। परन्तु होता यही है कि जीवन भर मनुष्य उसके लिये तरसता रहता है और सोते जागते, हंसते खेलते, नाचते गाते उस प्राणी की, उस वस्तु की झलक देखता है। न देखते हुए भी उसे देखता है, न सोचते हुए भी सोचता है, न याद करते हुए भी याद करता है और मृत्यु के अन्तिम क्षण

और जीवन के अन्तिम छोर पर भी उसी उसी के रूप की छटा देखता है क्योंकि यह अनुष्य की सुन्दर-तम भावना की पुण्य स्मृति होती है जिसे भुलाया नही जा सकता। यद्यपि इस क्षण से पूर्व राघवराव का विचार था कि उसने चन्दरी को सदैव के लिये भुला दिया है, जैसे भूमि-प्रेम ने नारी-प्रेम पर विजय प्राप्त कर ली थी। परन्तु अब उसे ज्ञात हुआ कि किसी एक वस्तु का प्रेम किसी अन्य वस्तु के प्रेम का हनन नहीं कर सकता। दोनो प्रेम अलग २ परन्तु एक दूसरे के साथी हैं और इस समय भोगावती नदी के तट पर चन्दरी का डेरा न देख कर, राघवराव के मन में विकलता, विह्वलता और उदासी की एक लहर दौड़ गई और वह समझ न सका कि वह क्या करे क्योंकि न्यायपूर्ण भूमिविभाजन द्वारा भूमि की समस्या को तो सुलझाया जा सकता है परन्तु प्रेम की समस्या को इस प्रकार हल नहीं किया जा सकता। भूमि को जरीब द्वारा नापा जा सकता है परन्तु प्रेम को नापने की कोई जरीब नहीं है।

जिस दिन रोती हुई चन्दरी को छोड़ कर वह उठ कर चला आया था उस समय उसके पास जीवन का अनुभव न था। उस समय क्रोध में वह चन्दरी के जीवन की कठिनाइयों को समझ न पाया था। चन्दरी का क़बीला ख़ानाबदोश, बेघर भूमि हीन, सब प्रकार से मालिक का ग़ुलाम था। उनकी दशा विट्टियों बल्कि पशुओं से भी

बुरी थी। इस परिस्थिति में उसका चन्दरी को वेश्या कहना वातावरण को चार दीवारी को समझने से इन्कार करना था। कदाचित वह उस समय स्वयं भी चन्दरीसे अधिक पवित्र न था— चन्दरी जिस के हृदय में प्रेमअग्नि दहक रही थी और जिसकी आखों में एक सुखी जीवन के लिये आंसू थें।

कदाचित इसी लिए उसके साथियों ने यह निर्णय किया था कि जो कोया लोग हैं, जो खानाबदोश हैं, जो जंगल जंगल और गाँव गाँव भटकते फिरते हैं और सबसे अधिक शोषितवर्ग है, उन्हे भी गाँव में भूमि दी जायगी। कदाचित ये साथी चन्दरी ऐसी लड़कियों के आसूओं का मूल्य जानते थे और यह भी जानते थे कि भूमि का प्रेम, मनुष्य के अन्य वस्तुओं के प्रेम का संगी है, सहायक है और जन्मदाता है। इस लियें जब चन्दरी को भूमि मिल जायगी तो वह सर्वांगपवित्र हो जायगी।

अब कदाचित वह चन्दरी को कभी न पा सकेगा। कदाचित वह कभी उसका मुखड़ा न देख सकेगा। कदाचित वह कभी उसके लिये झोपड़ा न बना सकेगा। उसके बच्चे को अपने हाथों में न उठा सकेगा। कदाचित् वह जीवन में उसके रेशम की भान्ति कोमल, सुकुमार शरीर का स्पर्श कभी न कर सकेगा। परन्तु उसे इस बात का विश्वास था कि आज उसके गाँव में मनुष्य और भूमि के जिस सम्बन्ध को दृढ किया गया है वह इतना सुन्दर

है कि उसके सौन्दर्य के रंगीन तत्व जीवन के अन्य सम्बन्धों में भी समोए जायंगे और फिर भोगावती नदी के तट पर कोई चन्दरी अपने वक्ष की पवित्रता के लिये रुदन नहीं करेगी।

इस विचार की सान्त्वना और इस विह्वलता की टीस अपने अन्तस् मे लिये, वह भोगावती के तट से उठ कर गाँव को लौट गया।

चन्दरी का प्रेम तो खैर राघवराव की निजी समस्या थी, परन्तु ज़मीदार की बन्कू समस्त गाँव की समस्या थी। इस बन्कू का किया क्या जाये ? ज़मीदार के भागने के पश्चात् बन्कू निर्जन पड़ी थी। अब के गाँव वालों को प्रथम बार ज़मीदार का घर देखने का अवसर मिला था। इस से पूर्व तो उन्होंने बन्कू का द्वार देखा था, उसका पत्थरों वाला फर्श देखा था, जहाँ वह बेगार के लिये, मालिये के लिये, जागीरदारी का टैक्स देने के लिये, अपनी भूमि कुर्क कराने के लिये और कभी कभी ज़मीदार के गुन्डों से चाबुक खाने के लिये बुलाए जाते थे। कुछ लोगों ने ज़मीदार का दीवानखाना भी देखा था और कुछ अभागिनों को ज़मीदार का शयनागार भी देखने को मिला था। परन्तु इससे पूर्व कोई विश्वास के साथ न कह सकता था कि ज़मीदार की बन्कू के पीछे के बड़े घर में उसके पाटे हुए बरामदों में, विस्तृत आंगनों में, और संगमरमर के फ़र्श वाले कमरों मे क्या है। पहले

चार पाँच दिन जब भूमिविभाजन हो रहा था तो किसी को इस बन्कू का ध्यान भी न आया। परन्तु जब भूमि की समस्या हल हो गई तो किसान लोग, उनकी पत्नियाँ और उनके बच्चे जत्थे के जत्थे बना कर बन्कू को देखने के लिये चले। वे लोग दरवाज़ों को खोल कर और बन्द करके देखते, संगमरमर के फ़र्श पर लेट कर हंसते। बालक सलूनों के चारों ओर दौड़ते थे और तालियाँ बजा बजा कर ऊंची छतों वाले कमरों में तालियों की प्रतिध्वनि सुनते और हर्षोन्मत्त हो कर किलकारियाँ मारते। बूढे भी बन्कू को भीतर से ऐसे देख रहे थे जैसे किसी अजायब घर में घूम रहे हों, यद्यपि बन्कू कोई अद्‌भुत वस्तु न थी कोई अलौकिक स्थान न थी। बन्कू आंधरा के ग्राम ग्राम में थी और उसकी ईंट ईंट किसानों के रक्त से पाथी गई थी।

बन्कू के स बन्ध में पहला निर्णय स्त्रियों ने किया—उन्हों ने कहा कि अन्दर का ज़नाना भाग स्त्रीसभा को दे दिया जाय। यहाँ सब स्त्रियाँ काम से निवृत्त हो कर ठाल के समय मिल कर बैठेंगी और दस्तकारी का काम करेंगी। बड़े दीवानखाने के सम्बन्ध में पंचों ने निर्णय किया कि वहाँ पंचायत बैठा करेगी। रत्स बण्डे में इतनी धूप आती है और पत्थर इतने तप जाते हैं कि ठण्डे दिल से किसी बात पर विचार करना सम्भव ही नहीं है।

और बन्कू के गोदाम में अनाज सुरक्षित रखा जायेगा। ज़मीदार का क्रीड़ागृह बहुत बड़ा था। राघवराव ने सोचा यहाँ पर बच्चों की पाठशाला खोली जाय क्योंकि स्कूल मास्टर को भी ज़मीदार अपने साथ ले गया था। परन्तु बच्चों को पढ़ाएगा कौन?" वृद्धा पुन्नमा ने पूछा। प्रश्न विकट था। गाँव में जो व्यक्ति शिक्षित थे वे पुलिस पटेल, पटवारी पुरोहित और ज़मीदार के कारिन्दे थे। वे सब गाँव छोड़ कर भाग गए थे। सारे गाँव में कोई पढ़ा लिखा न था क्योंकि ज़मीदार के विचार में पढ़ने लिखने की कोई आवश्यकता न थी। पढ़ने लिखने से नये नये विचार मस्तिष्क में आते हैं, विद्रोह की भावना उत्पन्न होती है, किसान जो कोल्हू का बैल होता है, अपने को मनुष्य समझने लगता है। और ज़मीदार को कोल्हू के बैलों की आवश्यकता थी, मनुष्यों की नहीं।

अन्त में राघवराव ने अहा "हम हैदराबाद से कोई पढ़ाने वाला मंगा लेंगे।"

"तब तक क्या होगा।" वृद्धा पुन्नमा ने फिर पूछा।

"तब तक में पढ़ाऊगा।" राघवराव बोला।

पुन्नमा की आखें खुशी से चमकने लगीं। राघवराव ने उससे पूछा— "तू खुश क्यों होती है? तेरा तो कोई बेटा नहीं जो पढ़ेगा।"

पुन्नमा ने सिर हिला कर उत्तर दिया—"नहीं मैं स्वयं पढ़ूगी।"

राघवराव कोठरी के ठण्डे, सीले फ़र्श से उठ खड़ा हुआ और धीरे धीरे सिर झुका कर चलने लगा। यहाँ तक तो सब कुछ ठीक हुआ था। परन्तु इसके बाद जो कुछ हुआ उसकी याद ने उसे बहुत व्याकुल कर दिया। जिस प्रकार उसके गाँव में भूमि विभाजन हुआ था उस प्रकार भूमि विभाजन सहस्रों अन्य गावों में हुआ था। दो चार मास ही में दस लाख एकड़ भूमि किसानों में बाँट दी गई थी। ज़मीदार और उनके पक्ष के लोग बड़े बड़े शहरों में जा छिपे थे और वहाँ रज़ाकारों, निज़ामशाही सेनाओं और पुलिस की सहायता से गाँवों पर आक्रमण करते थे। श्रीपुरम के गाँव पर भी जगन्नाथ रेड्डी ने दो बार आक्रमण किया परन्तु दोनों बार गाँव के किसानों ने बड़ी वीरता और साहस से उसकी हिंसा का प्रतिरोध किया और अपने घरों अपनी भूमि और अपनी स्त्रियों की इज़्ज़त की रक्षा की। और जगन्नाथ रेड्डी को दोनों बार क्षति उठा कर लौटना पड़ा। श्रीपुरम के किसानों के भी बहुत से व्यक्ति मारे गए और राघवराव भी बुरी तरह घायल हुआ।

फिर एक दिन गाँव वालों ने सुना कि हैदराबाद पर कांग्रेस ने अधिकार कर लिया। बहुत से गाँव वाले यह सुन कर अत्यन्त पुलकित हुए। अब अपने देश पर अपने लोगों का राज्य हो गया है। अब हमारी भी सुनी जायगी और जगन्नाथ रेड्डी को सरकार अवश्य दण्ड देगी। इस अवसर पर गाँव के अधिकतर लोगों ने दीपावली मनाने

का निर्णय किया। कुछ लोग इसके विरुद्ध भी थे। राघवराव के मन में भांति भांति के सन्देह और भय जन्म ले रहे थे। परन्तु वह कुछ बोला नहीं। इस लिये श्रीपुरम गाँव ने दीपावली मनाने का निश्चय किया।

गाँव में, मन्दिर में, रत्सबण्डे पर और सबसे बढ़ कर बन्कू पर दिये जलाये गए। बन्कू के मुख्य द्वार पर सहस्रों दीपक जगमग जगमग कर रहे थे और दूर २ से लोग इस दीपावली को देखने के लिये और अपना राज्य स्थापित होने के लिये एक दूसरे को बधाइयाँ देनें के लिये आये थे। स्त्रियां भजन गा रही थी। एक और बुर्रा कथा हो रही थी। बन्कू के बाहर खेतों में बच्चे बलंग-गोडी खेल रहे थे।

इतने में गांव के ऊपर एक वायुयान चक्कर काटता हुआ दिखाई दिया। बहुत से लोग यह तमाशा छोड़ कर वायुयान को देखने लगे। वायुयान ने गांव के दो तीन चक्कर लगाए, बहुत से पर्चे गिराए और फिर उठ कर आकाश में विलीन हो गया। बहुत से लोग दौड़ कर खेतों से उन कागज़ों को उठाने के लिये गए। पर्चे वृक्षों की टहनियों से उतारे गए, छत्तों के छप्परों से उतारे गए। बच्चे खेतों से पर्चे उठा कर लाए। एक स्त्री के गोद में पर्चा आ कर गिरा था। वह उसे दौड़ी दौड़ी राघवराव

के पास ले कर आई। थोड़ी देर में राघवराव के पास सहस्त्रों पर्चे एकत्रित हो गए।

राघवराव उस छपे हुए पर्चे को पढ़ने लगा। सहस्त्रों किसान उसके पास एकत्रित हो गए।" राघवराव बताओ इसमे क्या है? राघवराव बताओ इसमें क्या है। यह छपा हुआ काग़ज़ क्या कहता है।"

"यह छपा हुआ काग़ज़ क्या कहता है। मेरा काग़ज तो देखो इस पर क्या लिखा है"– बहुत से लोगों ने अपने अपने पर्चे उसके सामने रख दिये।

राघवराव ने दो तीन पर्चे पढ़ कर कहा– "ये काँग्रेस के पर्चे हैं। इन सब पर एक ही बात लिखी हुई है।

"क्या है, शीघ्रता से बताओ, हमारी काँग्रेस क्या कहती है," "काँग्रेस कहती है कि जिन किसानों ने ज़मीदारों से भुमि छीनी है वह उन के भूमि लौटा दें क्योंकि ज़मींदार भी किसानों के भाई हैं और भाई को भाई का हक़ नहीं छीनना चाहिये। इस लिये किसानों से प्रार्थना की जाती है कि वे स्वयं भूमि ज़मीदारो को लौटा दें।"–

राघवराव पर्चा पढ़ कर किसानों के चेहरों को देखने लगा। बहुत देर तक भीड़ मौन, निस्तब्ध खड़ी रही। कोई कुछ न बोला।

अन्त में एक किसान ने बड़े जोश से कहा– "भूमि

तो उसकी होती है जो उसमें हल चलाता है, उसमें काम करता है, परिश्रम करता है। भूमि उसकी कैसे हो सकती है जो दूसरों की कमाई पर अपने महल खड़े करता है। कांग्रेस आंधरा के किसानों से कहती है कि वे भूमि ज़मीदारों को लौटा दें और ज़मीदारों को कुछ नहीं कहती जो शताब्दियों से हमारी भूमि हड़प किये हुए हैं।"

राघवराव ने कहा– वे तो तुम्हारे भाई हैं। ऐसा इस पर्चे में लिखा हुआ है।"

"भाई होंगे वे कांग्रेस के" एक और किसान चिल्ला कर बोला– "हमारे तो वे शत्रु हैं।"

वृद्धा पुन्नमा क्रोध से बोली– "कोई कुछ भी कहे, वायुयान छोड़ स्वयं भगवान भी चल कर आए तो मैं अपनी भूमि ज़मीदार को कदापि नहीं लौटाऊंगी।"

यह कह कर पुन्नमा क्रोध में भरी बन्कू के मुख्य द्वार की ओर दौड़ी और उसके एक जलते हुए दीपक को उठा कर ज़ोर से धरती पर पटक दिया और फिर अन्य दीपकों को फूंक मार मार कर बुझाने लगी।

थोड़े समय पश्चात् बन्कू पर अंधेरा था और गांव के सारे दिये बुझा दिये गए थे और किसान व्याकुल और चिन्तित एक दूसरे का मुंह ताक रहे थे।

और फिर एक दिन जगन्नाथ रेड्डी और प्रताप रड्डी पुलिस और फ़ौज को साथ ले कर श्रीपुरम आएं और गांव

पर अधिकार कर लिया। जिस समय राघवराव को गिरफ़तार किया वह स्कूल में बच्चों को पढ़ा रहा था।

राघवराव पर रज़ाकारों की हत्या का अभियोग लगाया गया। उस पर मुक़दमा चला। उसे फाँसी का दण्ड मिला—कल सुबह सात बजे......

राघवराव ने अपने मन को टटोला। क्या वह सचमुच हत्यारा था? हत्या की घटना में एक चेहरा होता है, या दो चेहरे होते हैं या बहुत से चेहरे होते हैं जिन्हें हत्या करने वाला याद रखता है, जिनसे उसे घृणा होती है जिनसे वह प्रतिशोध लेना चाहता है या जिन्हें वह विभिन्न प्रकार की भावनाओं के प्रभाव में आकर, चाहे वे घृणा की भावनायें हों अथवा प्रेम की, मार डालता है। परन्तु यहाँ तो कोई चेहरा न था, कोई ऐसी भावना न थी। रात्रि के अन्धकार में रज़ाकारों नें, सैना और पुलिस की सहायता से उसके गांव पर आक्रमण किया था। रक्षात्मक

कार्यवाही करते समय उसके सामने कोई चेहरा न था। उसके सामने अत्याचार की अंधी शक्ति थी। इस से पूर्व वह जलते हुए गाँव देख चुका था, आग की लपटों में भस्म होते हुए खेत देख चुका था। उसने यल्ला रेड्डी की पथराई हुई आखें देखी थीं। और यह सब कुछ देख कर उसने विरोध करने का दृढ संकल्प कर लिया था। उसने किसी का चेहरा न देखा था। उसने केवल अपने गाँव पर अत्याचार की बढ़ती हुई काली छाया को देखा था और उसने आगे बढ़ कर उसके वक्ष में भाले की नौक घोंप दी थी यदि अत्याचार का विरोध करना हिंसा है, यदि अपने प्राणों की रक्षा करना, अपनी माताओं के सतीत्व की रक्षा करना अपने खेतों की सुनहेरी बालियों की रक्षा करना हिंसा है और दिल का धड़कना भी हिंसा है।

राघवराव ने अन्तिम बार अपने मन को टटोला और अन्तिम बार भी उसे किसी ऐसे अपराध का चेहरा दिखाई न दिया जिसपर उसकी आत्मा को लज्जित होना पड़ता। और जब वह यहाँ तक पहुंचा तो उसने अपने जीवन के सारे पन्ने पलट लिये थे। उसने अपने जीवन की पुस्तिका बन्द करके रख दी और सहर्ष मृत्यु से साक्षात होने के लिये उद्यत हो गया।

काल कोठरी का द्वार फिर खुलने लगा। राघवराव ने सीखचों के दूसरी ओर अपने पिता का चेहरा देखा। उसके पीछे बूढ़े वार्डर का चेहरा था जिसकी गहरी काली आँखें सजल हो रही थीं।

विरैया धीरे धीरे अपने पुत्र की ओर बढ़ा। उसके पास आकर ठहर गया। राघवराव ने धीरे से अपना मुख फेर लिया और धीमें स्वर में कहा– "बैठ जाओ, बापू।" विरैया और राघवराव काल कोठरी के फ़र्श पर बैठ गए। विरैया के होंट काँप रहे थे, उसके हाथों की की मुट्ठियाँ मिची हुई थी, उसका सिर न जाने कैसे धीरे धीरे हिल रहा था। वह बहुत कुछ कहना चाहता

था परन्तु शायद कुछ न कह सकता था। उसकी यह दशा देख कर राघवराव का दिल भर आया। बड़ी कठिनता से अपने ऊपर संयम करके उसनें अपने पिता से पूछा—

"गाँव का क्या हाल है ?"

"गाँव में अब कोई नहीं रहा। जितने युवक थे, वे सब पकड़ लिये गए। जो बचे, वे जंगलों में जा छिपे जहाँ दिन रात पुलिस उन्हें पकड़ने जाती है। फिर कभी आधी रात के समय जंगलों से गोली चलने की आवाज़ आती है और बूढ़ी पुन्नमा कहती है "एक और गया" और फिर हंस कर क़हक़हे लगाती है।

"बूढ़ी माँ पुन्नमा ?" राघवराव ने पूछा।

"हाँ पुन्नमा पागल हो गई है।"

राघवराव कुछ क्षणों के लिये मौन हो गया। फिर बोला— "और जगन्नाथ रेड्डी ?"

"ज़मीदार तो अपनी बन्कू से बाहर नहीं निकलता। सैना और पुलिस का सबसे बड़ा पहरा तो बन्कू ही पर है या चुन्गी के नाके पर। एक गाँव से दूसरे गाँव को जाने पर प्रत्येक किसान को उस नाके पर तलाशी देनी पड़ती है।"

इसके पश्चात् फिर कई क्षणों के लिये निस्तब्धता छा गई। फिर विरैया के होंट काँपने लगे। वह धीरे से बोला— "गाँव वाले कहते हैं तुम्हारी अपील नामन्ज़ूर हो गई है।" "हाँ" राघवराव बोला।

"रंगड्डू धोबी कहता था कि जगन्नाथ रेड्डी उस से कहता, था कि अगर राघव माफ़ी माँग लेता तो यह सज़ा न होती।" "किस बात की माफ़ी?" राघवराव ने क्रोध से कहा। विरैया नें विनय पूर्वक कहा– "मैं कुछ नहीं कहता, रंगडू धोबी ऐसा कहता था।"

"और तुम क्या कहते हो बापू!" राघवराव ने पूछा। विरैया धीरे धीरे रुकते रुकते बोला– "कभी कभी मैं सोचता हूं, जो कुछ तुमनें किया, ठीक किया। कभी कभी मैं सोचता हूं कि मेरा एक ही बेटा है, विरैया ने सिर झुका लिया। राघवराव ने अपनें पिता के कन्धे पर हाथ रख कहा– "बापू तूने झुके बन्कू के प्रति घृणा प्रदान की थी। क्या तू आज उस घृणा को लौटाने आया है?" "नहीं" विरैया के मुख से अनायास निकला– "परन्तु बेटा मैं एक अनपढ़ अज्जड किसान हूं। कभी कभी मैं सोचता हूं तो मुझे मालूम नहीं होता, किस लिये मेरा एक ही बेटा मुझ से छिन गया है। कभी कभी जब जंगल से गोली चलने की आवाज़ आती है तो रात बहुत काली लगने लगती है।"

राघवराव नें अपना हाथ पिता के कन्धे से उठाया नहीं बल्कि कन्धे को और जोर से पकड़ लिया– वह धीरे धीरे बोलने लगा मानो एक एक शब्द उसे समझा रहा हो। "बापू तुझे वह मेला याद है जब रमैया चेट्टी की

दुकान पर खड़े खड़े मैंने रेशम के थान को हाथ लगा दिया था और रमैया चेट्टी ने मुझे गालियाँ दो थी और तूने रेशम के थान से मेरा हाथ खीच लिया था। कदाचित् उस समय तू अपने बेटे के मन की दशा जानता था जो जगन्नाथ रेड्डी के पुत्र प्रताप रेड्डी की भांति रेशम की क़मीज़ पहनना चाहता था। कदाचित् तू अपने मन में तो जनता था कि रेशम विट्टियों के लिये नहीं है। सारा खद्दर इधर है, सारा रेशम उधर है। सारी भूख इधर है, सारा अनाज उधर है। सारा अपमान इधर, सारी प्रतिष्ठा उधर है। बापू तेरे बेटे का अपराध इस से अधिक कुछ नहीं है कि उसने रेशम के थान को छूने का प्रयास किया है। उसने उस युग को समीप लाने की प्रयत्न किया है जिस में मनुष्य रेशम के कोये, गेहूं का बाली और खेत के मखमल के लिये रोएगा नहीं। जिसमें समस्त कोमलताएं मनुष्य के भाग्य में होगी। इस दूरदर्शी दृष्टि रखने के अपराध में तेरे बेटे को सात बजे फाँसी दी जायेगी। बस इसके अतिरिक्त तेरे बेटे का और कोई अपराध नहीं है। विरैया रोने लगा।

राघवराव ने कहा– "बापू यदि तू रोएगा तो संसार क्या कहेगा। गाँव वाले क्या कहेंगे। ज़मीदार की बन्कू तुझे देख कर कितनी प्रसन्न होगी।"

विरैया ने अपने आंसू पोंछ डाले। राघवराव देर तक विरैया को समझाता रहा। इतने स्नेह और सामीप्यभाव

से उसने आज तक अपने पिता से बातें न की थीं। जैसे वह आज सब कुछ अपने पिता के दिल में डाल देना चाहता था– जो कुछ वह था, जो कुछ उसने सोचा था, किया था, कर न सका था परन्तु करना चाहता था। वह सब कुछ आज अपने पिता को बता कर, बिदा होना चाहता था। रेशम की कमीज़ की बात उसके पिता की समझ में अन्य बातों से अधिक आई थी। इस लिये उसने अपने पिता को हैदराबाद की कहानियाँ सुनाईं। किस प्रकार उसका मन रेशम की क़मीज़ लेने के लिये मचलता था। इसके लिये रुपये जमा करने के लिये उसने कितने यत्न किये थे। परन्तु कभी कुछ हो गया, कभी कुछ हो गया और वह अपनी कामना पूरी न कर सका। बड़ी साधारण सी बात थी परन्तु इन साधारण साधारण सी बातों के लिये, रेशम की क़मीज़ के लिये, अनाज के एक दाने के लिये; प्रतिष्ठा की एक मुस्कान के लिये सौन्दर्य की एक किरण के लिये– विट्टियों के संसार में अभाव का मरुस्थल फैला हुआ था। कब तक इस संसार में वीरानी और सन्नाटा रहेगा। इनकी दशा सुधारने के लिए ऊपर से कोई नहीं आएगा। यह कार्य स्वयं विट्टियों को करना होगा वरन् हज़ारों वर्षों की भांति आज भी रेशम उधर रहेगा, नग्नता इधर रहेगी।

बहुत समय तक राघवराव अपने पिता को समझाता रहा। उसका पिता ध्यान पूर्वक उसकी बातें सुनता रहा।

दोनो, पिता पुत्र, एक दूसरे से ऐसे सटे हुए और तन्मयता से बातें कर रहे थे जैसे वे कालकोठरी में नहीं अपनें गाँव के रत्स बण्डे में बैठे हुए हों। सहसा किसी ने कालकोठरी के द्वार को खटखटाया और राघवराव और विरैया चौंक पड़ें। द्वार पर बूढ़ा वार्डर खड़ा था।

वह क्षमा याचना के स्वर में बोला-- "अब मेरी ड्यूटी समाप्त होने वाली है। इस लिये विरैया को अब जाना होगा। नए वार्डर ने देख लिया तो अच्छा न होगा। वह बड़ा कठोर है।"

विरैया उठ खड़ा हुआ। राघव को छाती से लगाया और बोला-- "कल सुबह फिर आऊंगा, गाँव से लौट कर।"
"परन्तु अब तुम गाँव जाते ही क्यों हो। यहीं शहर में ठहरे रहो या जेल के बाहर कहीं सो जाओ।"

विरैया बोला-- "नहीं मैं गाँव चला जाऊगा। सुबह को आ जाऊंगा। आज रात मैं चलता ी रहूं तो ठीक है नहीं तो ...." विरैया वाक्य पूरा किये बिना वहाँ से चला गया।

विरैया जब लौट कर गाँव पंहुचा तो गाँव में सब लोग सो चुके थे। केवल पुन्नमा की झोपड़ी में दीया जल रहा था और द्वार खुला था। वह धीरे से पुन्नमा की झोपड़ी में गया और उसे यह देख कर बहुत अचम्भा हुआ कि पगली अभी तक जाग रही है। उसकी आखों में व्याकुलता और विकलता स्पष्ट थी। विरैया को देख कर पुन्नमा तुरन्त खाट से उतर कर उसके पास आ गई और उस से कान में बातें करने लगी।

"कैसा है मेरा बेटा?" पुन्नमा नें इधर उधर देखते हुए पूछा– "अच्छा है तुम्हारे पाँव छूता है।"

"जीता रहे, जुग जुग जिये मेरा लाल" पुन्नमा के मुख से अनायास निकला। फिर वह तुरन्त चुप हो गई।

फिर अकारण एक खोखली हंसी हंसने लगी। विरैया उसकी ओर विस्मय से देखने लगा। फिर पुन्नमा हंसते २ रुक गई और विरैया की ओर देख कर बोली-- "विरैया मैं पगली नहीं हूं। हाँ कभी कभी मेरा मन इस प्रकार घबराने लगता है कि मुझे हंसना ही पड़ता है। न हंसू तो मर जाऊं।"

विरैया मौन रहा।

पुन्नमा उसकी ओर देख कर बोली– "अवश्य तुम्हारे मन में कोई बात है मैं तुम्हें जानती हूं। अवश्य तुम्हारे मन में कोई बात है जो तुम्हें चुभ रही है। बताओ क्या बात है"? विरैया बोला– "नहीं माँ, कोई बात नहीं है।"

"अवश्य है, बताओ, नहीं तो मैं चिल्ला चिल्ला कर हंसूगी।" विरैया ने कहा– माँ मैं सोचता हूं मेरा बेटा रेशम की क़मीज़ पहनना चाहता है।"

'रेशम की क़मीज़?' पुन्नमा हंसी ,, रेशम की कमीज़; कैसी बातें करते हो। क्या राघवराव ने स्वयं तुम से कहा था?"

नहीं माँ उसने तो कुछ नहीं कहा परन्तु मैं ऐसा सोचता हूं कि यदि मैं उसे रेशम की क़मीज़ पहना सकूं तो वह मरते समय बहुत प्रसन्न होगा।

पुन्नमा ज़ोर ज़ोर से हंसनें लगी--'रेशम की क़मीज़; हा हा हा। रेशम की क़मीजा यह भी खूब कही, अच्छा ठट्ठा

है; हा हा हा बिरैया तुम तो सदा के बुद्धू हो। रेशम की क़मीज़ हा हा हा इस गाँव में किसी के पास रेशम की क़मीज़ है? बिरैया तुम तो निरे मूर्ख हो।'

पुन्नमा ज़ोर ज़ोर से हंसने लगी। बिरैया नें विनीत स्वर म कहा– "तुम नही समझती हो पुन्नमा। तुम मेरे– एक बाप के दिल को नहीं समझती हो। मुझे याद हैं जब मैं ने बच्चे को ताड़ का पिगल ले कर दिया थो तो उस समय राघवराव ने किस प्रसन्नता से मेरी ओर देखा था। उसका एक एक खिलौना मुझे याद है। तुम जानती हो बिट्टी अपने बेटे को अधिक खिलौने नहीं दे सकता। खिलौने बहुत कम बिट्टी के लड़कों के जीवन में आते हैं। खिलौनों से अधिक खिलौनों की अभिलाषा उनके मन में रह जाती है। आज जब मेरा जवान बेटा, बाईस वर्ष का राघव रेशम की क़मीज़ की बात कर रहा था, मैं ने उसकी आखों मे वही बचपन की चमक देखी। वही कामना, वही चाह, जो बाप के दिल को मुट्ठी में पकड़ लेती है। तू तो माँ है पुन्नमा। तू क्या यह सब कुछ नहीं जानती।" पुन्नमा का सिर झुक गया– "मेरे तो सब मर गए; एक भी न रहा। कुछ अकाल में मारे गए; कुछ प्लेग की भेंट चढ़ गए; कुछ जेलों में सड़ गए; जो शेष बचे उन्हें ज़मीदार के अत्याचार ने खालिया। मेरे तो सब मर गए बिरैया। मै अब कुछ नहीं जानती।"

विरैया ने कहा– इस गाँव में किसी के पास रेशम की क़मीज़ होगी ?

पुन्नमा फिर ज़ोर ज़ोर से हंसने लगी। वह इतने ज़ोर ज़ोर से चिल्लाई कि निकट के झोंपड़ों से दो चार किसान दौड़ते दौड़ते निकल आए। विरैया को देख कर उनकी ढारस बन्धी। पूछने लगे– "क्या बात है; पगली क्यों हंस रही है?" पुन्नमा बोली "पागल मैं हूं या यह है जो कहता है, मेरे बेटे के लिये रेशम की एक क़मीज़ चाहिये।" विरैया ने सारी कथा उन किसानों को सुनाई। डरते डरते वे किसान बोले "विरैया हम तेरा दिल समझते हैं परन्तु इस समय रेशम की क़मीज़ कहाँ से आयेगी और किस के पास है। और फिर राघवराव को सुबह फाँसी दी जाने वाली है और तू रेशम की क़मीज़ ढूंढ रहा है। राघवराव ने यदि सुन लिया तो नाराज़ होगा कि उसका बाप उसके मरने पर कैसी हरकतें कर रहा था।" एक किसान ने कहा– "गौरम्भा का विवाह होने वाला है अगले मास। उसके बाप से पूछें, विवाह के लिये उसने रेशम का कोई कपड़ा लिया हो। विरैया की साध भी पूरी हो जाएगी।"

दूसरे किसान ने कहा– "तुम भी निरे मूर्ख हो। गौरम्भा के बाप के पास रेशम ख़रीदने के लिये पैसे कहाँ हैं, पागल मत बनो।"

बिरैया ने झिझकते २ कहा-- "आखिर पूछने में क्या है ?" दो तीन किसान बिरैया के साथ गौरम्मा के घर जाने को तैयार हो गए। एक बूढ़े किसान ने टोका-- "जो पुलिस आगई और पूछने लगी कि रात को यह क्या खुसर पुसर हो रही है तो क्या होगा ?"

एक किसान नें चमक कर कहा-- „वह देखा जाएगा तुम चलोजी गौरम्मा के घर।"

जहाँ जहाँ से ये लोग गुज़रते गए; किसान जागते गए और उनके साथ होते गए। रेशम की कमीज़ की चर्चा बढ़ती गयी। जब ये लोग गौरम्मा के घर पहुंचे तो वहाँ पहले से यह समाचार पहुंच चुका था। उसने हाथ जोड़ कर कहा-- "ये खाट पर सारे कपड़े रखे हैं जो मैं नें अपनी गौरम्मा के विवाह के लिये बनाए हैं। इनमें मे तो एक भी रेशम का कपड़ा नहीं है, बाक़ी मेरे घर की तलाशी ले लो। राघवराव के लिये रेशम की क़मीज़ तो क्या मैं अपनी जान तक देने के लिये तैयार हूं।"

वहां से चल कर लोग इधर उधर टोह लेने लगे। थोड़ी देर में घर घर कपड़े देखे जाने लगे। अब सारे

गाँव को कहीं न कहीं से रेशम की कमीज़ लाने की धुन लग गई। बड़े बूढ़े इस कार्य में सब से अधिक भाग लेने लगे। जो युवक थे वे इसे विरैया का पागलपन समझते थे परन्तु इस अवसर पर साथ थे। घरों में बन्द द्वारों के पीछे परामर्श होने लगे। इतने में रामलू धोबी दौड़ता हुआ विरैया के पास आया। उसके पास मैले कपड़ों की गठरी थी। वह गठरी उसने विरैया के आगे खोल दी और उस से कहा-- "इसमें दो रेशम की कमीज़ें हैं। एक जगन्नाथ रेड्डी की है; एक प्रताप रेड्डी की।"

विरैया ने घृणा से कहा-- "मेरा बेटा ज़मींदार की उतरी हुई क़मीज़ पहनेगा? रामलू तुम कैसी बातें करते हो।" रामलू ने चिन्तित हो कर कहा "तो फिर गाँव में और रेशम की कमीज़ कहाँ से आएगी?"

विरैया चुप हो गया। बहुत से युवक लौट गए। सहसा विरैया को कुछ याद आया और वह अपनी झोपड़ी की ओर भागता चला गया। झोंपड़ी में जा कर काठ का सन्दूक़ खोल कर उसने अपने पुराने वस्त्रों को बाहर निकाला। सब से नीचे उसकी पत्नी के वस्त्र रखे हुए थे जो उसकी पत्नी के पिता ने दहेज में दिये थे। अन्य सब कपड़े तो फट चुके थे केवल रेशम की एक ओढ़नी शेष रह गई थी जो राघवराव की माता ने अपनी पुत्रवधू के लिये रख छोड़ी थी। वह कभी कभी बड़े गर्व से अपने पति को यह ओढ़नी दिखाया करती थी। और

कहती "है किसी विट्ठी की घरवाली के पास ऐसी ओढ़नी– यह ओढ़नी मैं अपने बेटे की बहू को दूंगी।"

विरैया ने अत्यन्त सावधानी से सन्दूक में सब कपड़ों के नीचे से यह सलवट भरी ओढ़नी निकाली– लाल रंग की सुन्दर ओढ़नी। पुराना रेशम था इस कारण उत्तम था। दीये के प्रकाश में उसकी चमक ने सब की आखों को चकाचौंध कर दिया। बहुत से युवक प्रसन्नता से चिल्ला उठे, मानो उन्होंने कोई मोर्चा जीत लिया हो– "कमीज़ मिल गई।"

विरैया ने पूछा– "इस ओढ़नी की कमीज़ बनेगी?"

एक किसान बोला "क्यों नहीं बनेगी। सोमअप्पा दर्ज़ी को इसी समय बुलाओ। समय बहुत थोड़ा है।"

एक किसान दर्ज़ी को जगाने गया। थोड़ी ही देर में वह सोमअप्पा दर्ज़ी को साथ लिये भागता भागता आया। सोमअप्पा ने ओढ़नी देख कर कहा– "यह कम है। इस में से क़मीज़ नहीं बन सकती– बन्डी बन सकती है।" युवक चिल्ला कर बोले "तो बन्डी ही बना दो परन्तु जल्दी करो।" सोमअप्पा ने कहा "मैं मशीन तो घर छेड़ आया हूं।"

एक किसान मशीन लेने उसके घर गया। इतने में सोमअप्पा ओढ़नी की तह खोल कर, उसकी सलवटें निकाल कर कपड़ा देखने लगा। उसे दो स्थान पर छेद दिखाई

दिये। कीड़ों ने कपड़ा खा लिया था।

विरैया ने चिन्तित हो कर पूछा-- "अब क्या होगा ?" सोमअप्पा ने मुस्करा कर कहा-- "कोई बात नहीं। मैं ऐसे काटूंगा कि यह छेद निकल जाँयगे। राघवराव की बन्डी में कोई छेद नहीं होगा।

इतने में मशीन आगई। सोमअप्पा ने बड़ी सावधानी से रेशम की ओढ़नी को कैंची से काटा और मशीन में तागा डाल कर उसे चलाने लगा।

जब सोमअप्पा मशीन फेर रहा था तो आधा गाँव उसकी ओर देख रहा था। ऐसी अद्भुत क़मीज़ उसने आज तक नहीं सी थी। उसे ऐसा लगता था मानो रेशम के प्रत्येक तार के साथ गाँव वालों के सांस सिये जा रहे हैं। उनकी समस्त आशाएं आकाक्षाएं इस रेशम के टुकड़े की सलवटों से बाहर झांकने का प्रयत्न कर रही हैं। एक दो बार जब मशीन चलाते चलाते सोमअप्पा के हाथों से थोड़ा सा रेशम फट गया तो सहस्रों कंठो से एसा वेदनापूर्ण स्वर निकला मानो उनका दिल भी साथ में फट गया हो। सोमअप्पा इसके पश्चात् और भी अधिक सावधानी से मशीन फेरने लगा।

एक स्त्री बोली-- "सोमअप्पा जल्दी करो। जब तुम क़मीज़ बना चुकोगे तो हम इस पर फूल काढ़ेंगी।

युवकों ने आश्चर्य से उस स्त्री की ओर देखा।

उस स्त्री ने कहा– "स्त्रीसभा भी राघवराव के प्रति अपनी श्रद्धाँजलि अर्पित करेगी।"

इसके पश्चात् वह क़मीज़ या बन्डी बिरैया के बेटे की नहीं रही, सारे गाँव के बेटे की हो गई। पाँच स्त्रियों ने गीत गाते हुये उस पर फूल पत्तियाँ निकाली, छाती पर दराँती और हथौड़े और गेहूं की बाली का चिन्ह बनाया। स्त्रियों ने क़मीज़ पर तिलक लगाया कुछ स्त्रियों ने इतने में फूलों के हार बना लिये। क़मीज़ को इन फूलों के हार में रख दिया गया। इतने में किसी को ध्यान आया कि और तो सब कुछ हो गया, पर क़मीज़ पर लोहा नहीं किया गया। स्त्री करने का लोहा सोमअप्पा के पास नहीं था, धोबी अपना लोहा ठीक कराने के लिये शहर दे आया था। हाँ ज़मीदार के निजी दर्ज़ी के पास लोहा अवश्य था जिसका घर बन्कू के पिछवाड़े था। परन्तु वहाँ कौन जाएगा क्योंकि पुलिस का पहरा बिल्कुल समीप था और यदि उन्हें आहट हो गई .... कदाचित् उन्होंने आहट सुन भी ली होगी ...... कदाचित वे किसी आक्रमण की प्रतीक्षा में चौकन्ने हो गए होंगे।

दो किसानों ने कहा कि वे बन्कू के पिछवाड़े जाएगे और ज़मीदार के दर्ज़ी से लोहा माँग लाँएगे। जब वे दोनों किसान चलेगए तो अगंडू विट्ठी ने कहा "जंगल में ख़बर कर दो। गाँव गाँव ख़बर कर दो। हम सब लोग रेशम की क़मीज़ ले कर जंग्ल जाएंगे।"

थोड़ी देर में सारा गाँव रत्सवण्डे में एकत्रित हो गया। मशालें जल रहीं थी, नारे लगाये जा रहे थे। अब किसी को ज़मीदार और उसके हिमायतियों का भय न था। और जब दोनों किसान लोहा लेकर आये तो उनमें से एक की टाँग गोली से घायल थी। परन्तु उस समय लोगों के जोश और उत्साह का पारा बहुत ऊपर पहुंच चुका था और गगनभेदी नारे लगाये जा रहे थे। और जब इन नारों की गूज दूसरे गाँव पहुंची तो वहाँ से भी इन नारों का उत्तर आने लगा। लोहा फेरने के पश्चात् क़मीज को हारों से सुसज्जित किया गया। इतने में पतिपाडू गाव से बुर्रा कथा कहने वाले, ढ़ोल बजाने वाले और अन्य किसान टोलियाँ बना बना कर आने लगे। किसानों का उत्साह प्रतिक्षण बढ़ता गया।

वह रात कोई नहीं भूलेगा– वह रात जब मशालें लिये हुए पाँच हज़ार किसानों का जलूस जमीदार की बन्कू के नीचे से निकला– उस समय बन्कू में कोई न था। जमीदार अपने हिमायतियों समेत बन्कू से भाग खड़ा हुआ था। मार्ग में जहाँ जहाँ कोई गांव पड़ता, वहां के लोग इस इस अद्भुत अनोखे जलूस में सम्मिलित होते गये। ज़मीदार गांव छोड़ कर शहरों को भागते गये। लोगों के नारे आकाश में गूंजने लगे और जलूस तेज तेज पग धरता हुआ जैत्र-यात्रा की भांति, जेल की ओर बढ़ता

गया— जेल जो एक रात की यात्रा थी— प्रातःकाल अत्यन्त समीप।

प्रातःकाल के समीप— जब राघवराव को वह क़मीज़ मिली तो उसने बड़े आश्चर्य से अपने पिता की ओर देखा— विस्मय, हर्ष और भावावेश से वह झूम उठा। और जब उसके पितानें उसे बताया कि किन २ कठिनाइयों से यह क़मीज़ बनाई गई है और किस प्रकार दस हज़ार किसानों का जलूस इस क़मीज़ को उठाए जेल के द्वार तक आया है तो राघवराव का मन गद्गद् हो उठा। उसकी आखों में आशा, भविष्य और उजाले का प्रखर प्रकाश फैल गया और उसने एक पुत्र की भांति अपना सिर पिता के कन्धे पर रख दिया और उस के पिता ने ज़ोर से अपने पुत्र को अपनी छाती से लगा लिया।

फिर बिरैया नें कहा— "समय कम है। अब तुम यह क़मीज़ पहन लो— यह मेरी इच्छा है, और गाँव वालों की भी इच्छा है। इसके ऊपर फिर तुम चाहे जेल के कपड़े पहन लेना।"

राघवराव ने मुस्करा कर जेल के कपड़े उतार डाले और फिर बड़ी श्रद्धा से और सावधानी से वह बन्डी नुमा लाल रेशम की क़मीज़ पहनने लगा। और जब वह क़मीज़ पहन रहा था तो उसका पिता उसके सामने खड़ा बड़े गर्व से अपने पुत्र को देख रहा था और पुत्र के अन्तर में विभिन्न भावनाओं का ज्वार उमड़ रहा था। लाल रेशम की क़मीज पहन कर राघवराव ने अनुभव किया मानो वह एक क़मीज़ नहीं पहने है, अपने जनसाधारण का झण्डा और उनके संघर्ष का महान चिन्ह पहने हुए है। मानो वह अपना रक्त पहने हुए है, अपने खेत पहने हुए है, अपने पिता का स्नेह और अपनी माता की ममता पहने हुए है। राघवराव की छाती उल्लास से प्रफुल्लित हो उठी और उसने लाल लाल रेशम की कोमलता का स्पर्श करते हुए अनुभव किया मानो यह कोमल सुकुमार स्पर्शप्रतीक है हज़ारों शहतूत की डालियों पर सरसराते हुए रेशम के कीड़ों का, मानव हृदय में जगमगाती हुई लाखों नई आशाओं और आकांक्षाओं का, सुकुमारियों की पहली २ कोमल

उंगलियों पर घूमने वाले करघों का, जिनकी छाया में जस्त के झूमर झूलते हैं। लाल रेशम की कमीज़ पर हाथ फेरते हुए राघवराव ने बड़े अभिमान, गर्व और प्रेम से अपने पिता की ओर देखा और उसे प्रतीत हुआ कि प्रभात के प्रकाश ने रात्री के गाल पर ऐसी चपत लगाई है कि जेल का सारा लोहा पिघल कर बह गया है, केवल एक दो सीखचे शेष रह गये हैं। और फिर दूसरे क्षण में उसने सीखचों के उस पार सूर्य को आकाश के गर्भ से इस प्रकार उदय होते हुए देखा जैसे माँ के आँचल मे शिशु ठुमक कर जाग उठता है और उसने प्रसन्नता से चिल्ला कर पिता से कहा– "बापू देखो, देखो, जेल के सीखचे भी सूर्य को नहीं रोक सके।

विरैया के नेत्रों में जल भर आया परन्तु उसने इस पवित्र जल को प्रवाहित होने से रोका नहीं। उसने इस पवित्र जल को अपने वृद्धमुख पर बहने दिया।

वार्डरों में घिरा हुआ उसका बेटा फाँसी के तख्ते की ओर बढ़ता गया। जलूस का जेत्र-यात्रा-गीत, जेल की दीवारों से टकरा टकरा कर व्योम में फैलता गया।

देखो!
समस्त तिलगाना जाग्रत है।
तबल बजाओ
विजय के जलूस का पथ प्रदर्शन करो।
मोर्चा जीत लो,
आंधरा के पुत्रो, आओ।

जेल के बाहर जो गीत गूंज रहा था, जेल के अन्दर भी वही गीत बिरैया के होंटो से फूट निकला। गीत गाते गाते बिरैया के मन में यह विश्वास दृढ़ हो गया कि जब तक आंधरा का किसान जीवित है, उसके संकल्प का झण्डा और जीत भी जीवित है। उसका पुत्र भी सदैव जीवित रहेगा और उसके गाँव में देशमुख कभी लौट कर नहीं आएगा।